मावली मंडई

छत्तीसगढ़ शासन

सत्यमेव जयते

Chhattisgarh TRTI

TRIBAL RESEARCH AND TRAINING INSTITUTE

आदिमजाति अनुसंधान एवं प्रशिक्षण संस्थान

नवा रायपुर अटल नगर, छत्तीसगढ़

शासकीय उपयोग हेतु

प्रतिवेदन क्रमांक : 12

नारायणपुर जिले के
मावली मंडई
का मोनोग्राफ अध्ययन

निर्देशन एवं मार्गदर्शन
शम्मी आबिदी
(आई.ए.एस.)
संचालक

अध्ययन एवं प्रतिवेदन
डॉ. रूपेन्द्र कवि
डॉ. राजेन्द्र सिंह

प्राक्कथन

छत्तीसगढ़ राज्य में निवासरत जनजातियॉ अपनी विशिष्ट जीवन शैली की विविधता से परिपूर्ण है। सामाजिक - सांस्कृतिक एवं धार्मिक विशिष्टता राज्य के बस्तर क्षेत्र की जनजातियों में एक विशिष्ट पहचान प्रदर्शित करती है। जनजातीय जीवन शैली में साप्ताहिक हाट-बाजार के साथ- साथ मड़ई-मेला का भी विशिष्ट महत्व दिखाई देता है। इनमें मंडई-मेला न केवल एक मनोरंजन का साधन है अपितु यह एक धार्मिक आस्था मान्यता, विश्वास एवं अलौकिक शक्तियों के प्रति कृतज्ञता ज्ञापित करने का भी माध्यम है।

बस्तर क्षेत्र के नारायणपुर जिले में आयोजित होने वाली "मावली मंडई" मावली माता को समर्पित होती है। मावली माता बस्तर की अराध्य देवी दंतेश्वरी का ही रूप मानी जाती है, सामान्यतः बस्तर में मंडई मेला का आयोजन संबंधित परगना के मुख्य देवता (मंडादेव) का जातरा होने के बाद आयोजित किया जाता है। मावली मंडई के अंतर्गत अराध्य परगना देव के जातरा सामूहिक जातरा के माध्यम से अनेकानेक धार्मिक कर्मकाण्डों एवं अन्य ग्रामों से आये विभिन्न सिरहाओं का अलौकिक शक्तियों से संपर्क आदि के माध्यम से संचालित मंडई के क्रियाकलाप लोगों के लिये आकर्षक एवं ध्यानमग्न कर देते हैं। मावली मंडई में देव बिहरनी किया, सजे एवं रंगारंग बाजार एवं कोकरेंग नृत्य आकर्षण का केंद्र होते हैं।

बस्तर क्षेत्र के इस प्रसिध्द मावली मंडई परंपरा की संस्कृति को संरक्षण एवं संवर्धन के उद्देश्य से एवं जनसामान्य, अध्येताओं, शोधार्थियों एवं जनजातीय जीवनशैली में रूचि रखने वालों पाठकों को सुलभ कराने के उद्देश्य से संस्थान द्वारा "मावली मंडई" के अभिलेखीकरण का कार्य किया गया ।

आशा है उक्त मोनोग्राफ राज्य की जनजातीय संस्कृति के संरक्षण एवं अभिलेखीकरण में उपयोगी सिध्द होगी।

शम्मी आबिदी (आई.ए.एस.)
संचालक
आदिमजाति अनुसंधान एवं प्रशिक्षण संस्थान
रायपुर (छ.ग.)

प्रस्तावना

नारायणपुर क्षेत्र की जनजाति पुरे विश्व में अपनी अद्वितीय संस्कृति और विरासत के लिए प्रसिद्ध है। नारायणपुर में प्रत्येक जनजातीय समूह की अपनी अलग संस्कृति है और वह अपनी विशिष्ट परंपरागत जीवन शैली को जीता है। प्रत्येक जनजाति की अपनी विशिष्ट सांस्कृतिक पहचान है। यहाँ निवासरत जनजातियाँ प्रकृति आधारित जीवन—यापन करती हैं। व्यवसाय में मुख्यतः वनोपज और लघुवनोपज संग्रहण करके आस—पास में लगने वाले साप्ताहिक हाट—बाजारों में विक्रय करना है। जिला नारायणपुर में निवासरत जनजातियाँ अपने खेतों में धान ही उपजाते हैं, जो उनके साल भर खाने के लिये पर्याप्त होता है। अपनी बाड़ी एवं मरहान में उड़द, मंडिया, कोसरा, तिल्ली उगाते हैं जिन्हें आवश्यकता होने पर स्थानीय हाट—बाजारों में विक्रय करते हैं। यहाँ के लोगों में धन संचय करने की प्रवृति नहीं होती, यही कारण है कि इनके जीवन में हाट—बाजारों का बहुत महत्त्व है।

प्रकृति के सान्निध्य में रहने वाले आदिवासियों के जीवन में मनोरंजन के पल बहुत कम आते हैं। इसलिये वह हर समय ऐसे अवसर की तलाश में रहते है, जिससे वह थोड़ी खुशियाँ मना सके। हाट—बाजार के दिन भी उसके लिये किसी उत्सव से कम नहीं होते, उस दिन बह सबसे मिलते—जुलते है और खुशियाँ बाँट कर अपने घर लौटते हैं। जिस तरह आदिवासी जन जीवन में हाट—बाजारों का महत्त्व है, उसी प्रकार मेला—मंडई का भी वह साल भर इन्तजार करते हैं। बस्तर का मेला—मंडई लोगों की धार्मिक आस्था से जुड़ा लोकोत्सव है, फलतः इसमें समाज का हर वर्ग बढ़—चढ़ कर सहभागिता करता है। बस्तर की गोंड़ी और हल्बी भाषा में मेला को मंडई कहा जाता है, इसलिये मेला के लिये 'मंडई ' शब्द का प्रयोग किया जाता है।

बस्तर में मेला—मंडई मनाने का क्रम माघ माह से प्रारम्भ हो जाता है। इस माह में बहुत ही खुशनुमा मौसम होता है। आदिवासी समाज अपने सभी आर्थिक कार्यों से निवृत्त हो चुका होता है वह अपने कृषि उपज को खलिहान में सुरक्षित रख चुका होता है, मरहान के उपजों को उड़द, कुल्थी आदि को मिंजाई कर चुका होता है। इस समय वनोपज और लघुवनोपज के संग्रहण का काम भी नहीं होता, यही वह समय होता है जब वह घूम—घूम कर अपने सगा—सम्बन्धियों से मिलता है, मेला—मंडई में अपनों से मिलने का आनन्द उठाता है। अपने आराध्य देवी—देवताओं की पूजा—पाठ करता है। देव संस्कृति का सम्पोषक आदिवासी समाज परम्परानुसार 'जातरा' (अपने देवताओं के विशेष सामूहिक पूजा) का सहर्ष आयोजन करता है।

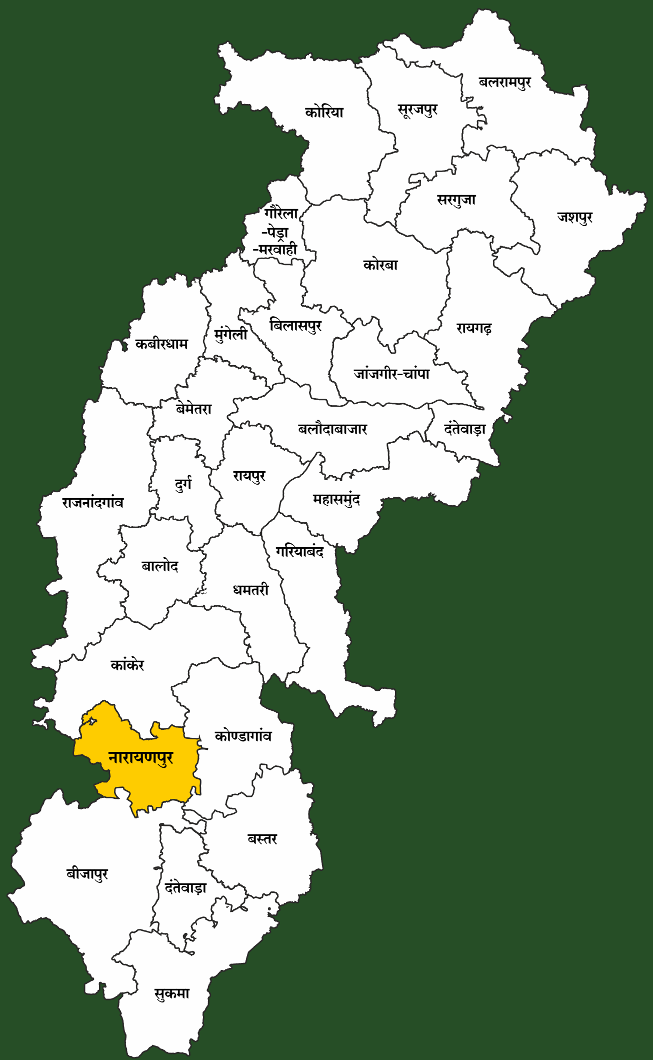

क्षेत्र एवं निवासरत जातियाँ

छत्तीसगढ़ राज्य का दक्षिणी भू–भाग बस्तर कहलाता है। वन सम्पदा और खनिज सम्पदा से भरपूर बस्तर सम्भाग केरल प्रान्त से भी बड़ा है। प्रशासनिक दृष्टिकोण से बस्तर सम्भाग को वर्तमान में सात जिलों में विभक्त किया गया है। ये जिले हैं–जगदलपुर, दन्तेवाड़ा, कांकेर, नारायणपुर, बीजापुर, कोण्डागाँव और सुकमा। बस्तर सम्भाग के दक्षिण–पश्चिम में जिला नारायणपुर स्थित है। 11 मई 2007 को बस्तर जिले से नारायणपुर जिला बनाया गया। जिसमें 366 गॉव है । नारायणपुर की कुल जनसंख्या 140206 (जनगणना 2011) है। राजनांदगाँव–बारसूर राज्यमार्ग में कोंडगाँव और अन्तागढ़ के मध्य तथा राष्ट्रीय राजमार्ग क्रमांक 30 पर रायपुर–जगदलपुर में कोण्डागाँव के पश्चिम में 50 कि.मी. की दूरी पर जिला मुख्यालय नारायणपुर स्थित है। इस जिले के उत्तर में कांकेर, दक्षिण में दन्तेवाड़ा, पूर्व में कोण्डागाँव जिला और पश्चिम में महाराष्ट्र राज्य का जिला गढ़चिरोली जिला स्थित है। इस जिले का विस्तार 19.05 उत्तरी अक्षांश से 19.55 उत्तरी अक्षांश तक तथा 80.40 पूर्वी देशांश से 81.31 देशांश तक विस्तारित है।

नारायणपुर जिला दो ओरछा और नारायणपुर विकासखण्डों में विभक्त है। क्षेत्रफल की दृष्टि से यह बड़ा जिला है। नारायणपुर जिला का क्षेत्रफल 5053.19 वर्ग कि.मी. है। अबूझमाड़ विकासखण्ड में विशेष पिछड़ी जनजाति (PVTG) अबूझमाड़िया जनजाति निवास करती है। नारायणपुर विकासखण्ड में बहु संख्यक मुरिया जनजाति के लोग निवास करते हैं। जिला नारायणपुर में निवासरत दोनों जनजातियों के जीवन पद्धति में व्यापक समानता है। नारायणपुर जिला में हल्बा जनजाति और अन्य जाति यथा–कोष्टा, धाकड़, मरार कलार, कुम्हार, राउत, केंवट, नाई, धोबी, घड़वा, अन्दकुरी (गांडा) आदि जातियां का भी निवासरत है।

निवासरत जनजातियाँ -

नारायणपुर क्षेत्र में अबूझमाड़िया, मुरिया और हल्बा जनजाति निवास करती है। इन जनजातियों की माता मावली इष्ट देवी है। इन आदिवासियो के जीवन–यापन, परम्परा, संस्कृति, मान्यतों में सहचार्य है, जो इन्हें आपस में जोड़ती है। इनके जीवन में एकरूपता है, वे प्रकृति आधारित जीवन–यापन करते हैं। ये लोग प्रकृति प्रदत्त साधनों और अपने श्रम से, सादगी और सरलता के साथ अपनी सीमित आवश्यकताओं की पूर्ति से करते हैं।

अबूझमाड़िया विशेष पिछड़ी जनजाति -

अबूझमाड़िया विशेष पिछड़ी जनजाति का निवास क्षेत्र छत्तीसगढ राज्य के नारायणपुर जिले के अबूझमाड़ क्षेत्र में है। अबूझमाड़िया जनजाति, अबूझमाड़ क्षेत्र के गहन वन एवं पहाड़ों से परिपूर्ण प्राकृतिक परिवेश में निवास करती है। अबूझमाड़िया जनजाति, स्वयं को 'मेटा कोईतोर' अर्थात 'पर्वतीय भूमि के निवासी' कहते हैं।

अबूझमाड़िया जनजाति का निवास क्षेत्र अबूझमाड, नारायणपुर जिले के ओरछा (अबूझमाड़) विकासखण्ड के अन्तर्गत है। सन् 2015–16 में आदिमजाति अनुसंधान एवं प्रशिक्षण संस्थान, रायपुर द्वारा कराये गये अबूझमाड़िया विशेष पिछड़ी जनजाति के आधारभूत सर्वेक्षण के अनुसार अबूझमाड़िया जनजाति नारायणपुर जिले के नारायणपुर व ओरछा विकासखंड के कुल 249 ग्राम में निवासरत है तथा अबूझमाड़िया जनजाति की जनसंख्या 23330 है।

अबूझमाड़िया जनजाति में गोंडी बोली का स्थानीय स्वरूप 'माड़ी' प्रचलित है। इनकी बोली द्रविड़ भाषा समूह के अन्तर्गत है। अबूझमाड़िया जनजाति की अर्थव्यवस्था प्रकृति पर आधारित निर्वाह की अर्थव्यवस्था है। अबूझमाड़िया जनजाति का आर्थिक जीवन संकलन, शिकार, पशुपालन, आदिम कृषि एवं परंपरागत कृषि पर आधारित है।

हल्बा जनजाति

हल्बा जनजाति छत्तीसगढ़, मध्यप्रदेश, महाराष्ट्र तथा उड़ीसा राज्य में निवासरत है। हल्बा जनजाति छत्तीसगढ़ राज्य में राजनांदगांव, बालोद, दुर्ग, धमतरी, कांकेर, नारायणपुर, कोंडागांव, बस्तर, दंतेवाड़ा, बीजापुर तथा सुकमा जिले में निवासरत हैं। सन् 2011 की जनगणना के अनुसार छत्तीसगढ़ राज्य में हल्बा जनजाति की कुल जनसंख्या 375182 है, जिसमें 183877 पुरूष तथा 191305 स्त्रियां हैं। हल्बा जनजाति में लिंगानुपात 1040 है। हल्बा जनजाति के सदस्य हल्बी बोली का प्रयोग करते हैं। यह बोली आर्य भाषा परिवार के अंतर्गत आती है। बस्तर क्षेत्र में हल्बी बोली को संपर्क भाषा (लिंग्वा फ्रैंका) दर्जा प्राप्त है। हल्बा जनजाति का परंपरागत कार्य कृषि तथा लाई–चिवड़ा बनाना व बेचना है। इसके अलावा वे मजदूरी, संकलन, मछली मारना, पशुपालन, नौकरी, व्यवसाय आदि कार्यों में संलग्न है। हल्बा जनजाति स्वयं को नारायणपुर क्षेत्र के आदि निवासी मानते है। हल्बा समुदाय के लोग माता के नाम से होने वाले आयोजन के लिये पूर्व से तैयारी करते है।

मुरिया जनजाति

मुरिया जनजाति छत्तीसगढ़ राज्य में मुख्य रूप से नारायणपुर, कोंडागांव तथा बस्तर, जिले में निवासरत हैं। मुरिया जनजाति गोंड जनजाति की प्रमुख उपजाति है। बस्तर क्षेत्र में मुरिया जनजाति की तीन उपजाति राजा मुरिया, घोटूल मुरिया व झोरिया मुरिया पाये जाते हैं। मुरिया जनजाति में 'घोटूल' युवागृह पाया जाता है। यह अविवाहित मुरिया युवक–युवतियों के लिये सामुदायिक प्रशिक्षण सह मनोरंजन केन्द्र है। मुरिया जनजाति में गोंडी बोली प्रचलित है। मुरिया जनजाति का आर्थिक कार्य संकलन, मछली मारना, पशुपालन, कृषि तथा मजदूरी आदि है।

अन्य जातियाँ -

यहाँ निवासरत अन्य जाति धाकड़, मरार, कलार, केंवट, घड़वा, अंदकुरी(गांडा) आदि भी अपने को प्राचीन निवासी मानते हैं और सभी जाति–जनजाति के लोग आदिकाल से माता मावली को अपनी आराध्य मानते हैं। यही कारण है कि माता के नाम पर होने वाले किसी भी आयोजन में चाहे वह जातरा हो या मंडई में सभी समान भागीदारी करते है।

उद्देश्य एवं महत्व -

उद्देश्य :-

नारायणपुर मावली मंडई पर्व के अध्ययन का प्रमुख उद्देश्य निम्नांकित है :–

1. नारायणपुर मावली मंडई पर्व के ऐतिहासिक जानकारी प्राप्त करना।
2. नारायणपुर मावली मंडई पर्व में उपयोग होने वाले पूजा–विधान का क्रमानुसार अध्ययन करना।
3. नारायणपुर मावली मंडई पर्व में प्रयोग होने वाले बलि प्रथा का अध्ययन करना।
4. मावली मंडई पर्व में जनजाति समुदायों द्वारा जन सहयोग व श्रम दान करने का अध्ययन करना।
5. नारायणपुर मावली मंडई में विभिन्न अनुष्ठानों का प्रथागत उपयोग होने का अध्ययन करना।
6. मावली मंडई के तहत योगदान दिये पुजारी, गायता, सिरहा, माँझी,चालकी, नाईक आदि का अध्ययन करना।
7. विभिन्न देशों से आए सैलानियों द्वारा बस्तर संस्कृति के आदान–प्रदान में सहयोग प्रदान करने का अध्ययन करना।
8. नारायणपुर मावली मंडई मे योगदान देने वाले पुजारी, गायता, सिरहा, माँझी,चालकी, नाईक आदि सदस्यों के साथ ही 'आयोजन समिति'/'मेला समिति' सदस्यों का अध्ययन करना।
9. नारायणपुर मावली मंडई पर्व में आए बदलाव का अध्ययन करना।

महत्व -

नारायणपुर मावली मंडई के अध्ययन का महत्व निम्नांकित है–

1. नारायणपुर मावली मंडई पर्व के सामाजिक, सांस्कृतिक, धार्मिक, राजनैतिक व्यवस्था को जानना।
2. नारायणपुर मावली मंडई से संबंधित प्रमुख देवी–देवताओं के संबंध को जानना।
3. नारायणपुर मावली मंडई पर्व के वैज्ञानिक अध्ययन में सहायक।
4. नारायणपुर मावली मंडई से संबंधित ज्ञान के विकास में सहायक।
5. नारायणपुर मावली मंडई में जनजातियों में एकता का संबंधी जानकारी प्राप्त करना।

इतिहास

नारायणपुर मावली मंडई के प्रामाणिक इतिहास का अभाव है। ऐसा अनुमान है कि नारायणपुर मावली मंडई का इतिहास 800 वर्षों से भी पुराना है जो कि राजा अन्नमदेव के पूर्व से हो रहा है। बस्तर के लोग काल खण्ड की गिनती कोई प्रसिद्ध घटना से करते हैं। इतिहास भी इनके लिये राजा अन्नमदेव के समय 800 वर्ष पुराना है। इस तरह यह मंडई चालुक्य वंशी राजाओं के पूर्व नलवंशीय और नागवंशीय शासन काल से चला आ रहा है। राजा अन्नमदेव के आने के पूर्व का इतिहास जनश्रुति और किस्से–कहानी में ही समाहित है, जो पीढ़ी दर पीढ़ी जारी है। अपने अतीत पर गर्व करने वाले जानकारों के कारण जो किस्से कहानियों एवं किंवदन्तियों में बस्तर के इतिहास को संजोये हुये हैं। एक ऐसी ही कहानी वह जनश्रुती अनुसार प्राचीन समय में मावली मंडई वर्तमान 'गढ़ गुडरा'(पहाड़ी मंदिर) के पास होता था। उस समय यह समूचा क्षेत्र बीहड़ था। इस काल में साप्ताहिक बाजार और साल में एक बार मंडई मेला 'चण्डीबड़' के मैदान में होती थी। यह स्थान सब मोहल्लों के मध्य में होने के कारण सुविधाजनक था। कहते हैं कि प्रति सप्ताह भरने वाले बाजार से एक बच्चा गुम हो जाता था। सभी लोग बहुत परेशान थे। इस समस्या का हल निकालने के लिये देव का आव्हान कर पूछा गया। देव भी कुछ बताने तथा हल निकालने में असमर्थ थे। कई तरह के उपाय करके लोग थक गये थे। लोगों ने डर से इस स्थान को छोड़ने का मन बना लिया था।

उस काल में 'पारद'(शिकार करने) खेलने जाने का चलन था। इस समय गांव के कुछ लोग पारद खेलने के लिये नारायणपुर के पूर्व में क्षेत्र की ओर गये थे। यह स्थान बहुत ही बीहड़ था। वे लोग एक साथ होने के बाद भी डर रहे थे। उन्होंने देखा, बियाबान जंगल में एक बुढिया अकेली बैठी थी जिसके पास में एक चार–पाँच साल का बालक खेल रहा था। सब सोच रहे थे कि इस बीहड़ में जब हम इतने लोग होने के बाद भी डर रहे हैं, तब यह बुढ़िया यहाँ कैसे बैठी है। सबने हिम्मत करके उसके पास जाकर के पूछा "हे माई तुम कौन हो और इस बीहड़ में अकेली क्यों बैठी हो? बुढ़िया माई ने उन्हें बताया कि उसके पूर्वजों ने उसे यहाँ रहने का आदेश दिया है, इसलिये वह अपने नाती के साथ यहाँ रहने के लिये आई है।

यह सुनकर लोगों को और भी आश्चर्य हुआ, वे विचार करने लगे इस जंगल में यह अकेली बूढ़ी महिला अबोध बालक के साथ यहाँ कैसे रहेगी। अभी वे लोग सोच ही रहे थे कि वह बूढ़ी महिला बोली "तुम लोग हमारी चिंता मत करो, हमारे पास हमारे पूर्वजों की शक्ति और अस्त्र–शस्त्र है, हम उनके सहारे यहाँ रह लेगें। उन लोगों को विश्वास दिलाने के लिये बुढ़िया ने अपने पास रखा ''झापी'' (बाँस की कमची से बना बक्सा जिसमें ढक्कन लगा रहता है।) को खोलकर दिखाया। उस झापी में कुछ अस्त्र–शस्त्र और देवताओं के पहनने वाले कपड़े रखे हुये थे। बूढ़ी माई ने कहा ''हमारे पूर्वज बहुत ही सामर्थ्यवान

लोग हैं, वे ही हमारी रक्षा करते हैं, तुम लोगों को चिंता करने की आवश्यकता नहीं है।'' पारद खेलने गये लोगों ने उस बूढ़ी माई से कहा ''हम तुम्हारे पूर्वजों से मिलना चाहते हैं, हमारे गाँव का भी एक काम है। बुढ़िया ने कहा "उनसे मिलने की आवश्यकता नहीं है, जो भी काम है, हमें बताओ, मेरा नाती मुश्किल से भी मुश्किल काम को करने में समर्थ है''। बुढ़िया की बात पर विश्वास करके लोगों ने बताया कि कैसे उनके गाँव में लगने वाले साप्ताहिक बाजार से एक बच्चा गुम हो जाता है। बुढ़िया ने गाँव वालों को आश्वस्त किया कि मेरा नाती सब ठीक कर देगा और पास में खेल रहे अपने नाती को बुलाकर देव बिठाया, उस बालक के शरीर में आरूढ़ देव ने बताया कि यह एक शरारती देव का काम है, इसे मै अपने वश में कर लूँगां, तुम सब निश्चिन्त होकर जाओ। गाँव के लोग विश्वास करके वापस हो गये।

पारद खेलने गये लोगों ने इस घटना को गाँव में सभी लोगों को आकर बताया। इस घटना को बहुत दिन बीतने के बाद गाँव के लोगों ने महसूस किया कि साप्ताहिक बाजार से अब बच्चों के गुम हो जाने की घटना नहीं हो रही है। गाँव वालों ने विचार किया यह उस बुढ़िया और उसके नाती का ही चमत्कार है। एक दिन गॉव के सभी लोग मिलकर चॉवल–दाल, फल–फूल लेकर बुढ़िया और उसके नाती से मिलने गये और उनसे कहा कि 'हमारे गाँव के बाजार से बच्चा गुमने का सिलसिला खत्म हो गया है, हम आपकी सेवा करना चाहते हैं। आप बताएँ कि हमारे लिये क्या आज्ञा है?" बुढ़िया ने फिर अपने नाती को देव बिठाया। उस बालक के शरीर में आरूढ़ देवता ने बताया कि वह शरारती देव एक गन्धर्व देवता है, जिसे मैने साँकल में बाँधकर कुम्हार पारा स्थित सेमल के वृक्ष में स्थान दिया है, वह अब कभी भी आप लोगों को नही सतायेगा''। गाँव के लोगों ने बालक के ऊपर आरूढ़ देवता से कहा कि हम ग्रामवासी आपकी सेवा करन चाहते हैं। हमें सेवा का अवसर देवें। देवता ने कहा "मै सात्विक देवता हूँ बलि पूजा नहीं लेता, यदि तुम सब प्रसन्न हो तो मेरा मंदिर बना दो, चलो मै स्थान दिखाता हूँ ग्रामवासियों को पीछे आने के लिये कहा और नारायणपुर के पटेल पारा में एक साल वृक्ष को चिंहित कर मंदिर बनाने के लिये कहा। ग्रामवासियों उस स्थान पर एक मंदिर बना दिया।

यह कहानी नारायणपुर में प्रति सप्ताह लगने वाले बाजार की प्राचीनता की ओर इशारा करती है। इसी स्थान पर साल में एक बार मंडई मेला भी भरता था। इससे मंडई की भी प्राचीनता छुपी हुई है। इस कहानी में बूढ़ी माई सती माता और बालक गढ़िया बाबा हैं। गढ़िया बाबा और सती माता के आगमन की इस कहानी में प्राचीनता की बात भी छुपी हुई है। देव संस्कृति के जानकार गढ़िया बाबा के विषय में बताते हैं कि बाबा गढ़ के प्रमुख होते हैं और गढ़ को संवारने वाले होते हैं। गढ़िया बाबा पाँच पाण्डव के प्रतिरूप हैं, इन्हें सभी जाति वर्ग के लोग बड़ी श्रद्धा से पूजते हैं। बाबा का विभिन्न जातियों के 9 परिवारों के लोग सेवा करते है। इन 9 परिवार से ही पुजारी और सिरहा होते हैं। जिस शरारती देवता को बाबा ने वश में किया और सेमल वृक्ष में स्थान दिया था। साँकल में बाँधने के कारण उन्हें सांकर देव कहा गया। वह गंधर्ब होने से उन्हें भी सेवा का अधिकारी बनाये और सेवा करने का दायित्व गंधर्ब (गांडा) जाति के परिवार को दिया। मावली मंडई में गढ़िया बाबा और सांकर देव साथ में सब देवताओं के आगे चलते

हैं। सांकर देव के आगमन तक सभी देवता उनकी प्रतीक्षा करते है।

वर्तमान में नारायणपुर के पहाड़ी मंदिर जाने के लिये बनाई गयी सीढ़ी के दाहिने ओर कुएँ को एक गढ़्ढे के रूप में देखा जा सकता है। उस काल में इसी कुएँ के ऊपर माता जी का एक मंदिर था। यहाँ स्थापित माता की मूर्ति अष्टधातु की बनी हुई थी। माता की पूजा करने का अधिकार हल्बा जनजाति के पात्र गोत्रीय लोगों का था, इस गोत्र के अन्तिम पुजारी बहैटी पातर और कृपाल पातर दो भाई हुये। मावली मंडई इसी माता के नाम से भरती थी। इस किले के पास ही एक ऐतिहासिक स्थल चण्डीबड़ स्थित है। मेला इसी जगह भरा करता था। चण्डीबड़ में रण चण्डी का वास होने के कारण इस बरगद के झुण्ड को चण्डीबड़ कहा जाता है। आज इस जगह को गढ़ गुडरा कहा जाता है।

गढ़ गुडरा स्थित माता के नाम से ही यह मंडई लगता था, माता के अन्तिम पुजारी बहैटी पातर बहुत ही गुणी व्यक्ति थे। वे तंत्र–मंत्र के ज्ञाता थे, गुनिया, वैद्य सभी गुण उनमें था। कहते बहैटी पातर माता से साक्षात वार्तालाप किया करते थे। माता भी बहैटी पातर की सेवा से अति प्रसन्न थी। कहते हैं कि उनका इकलौता पुत्र रामचन्द्र बहुत ही भयंकर बीमारी से ग्रसित हो गया। बहैटी पातर ने अपने पुत्र को ठीक करने का बहुत प्रयास किया, परन्तु परिणाम कुछ नहीं निकला। थक–हार कर बहैटी पातर ने माता के पास गुहार लगाई। इस कठिन समय में माता ने भी बहैटी पातर की कोई सहायता नहीं की और उनका एक मात्र पुत्र चल बसा। बहैटी पातर को गहरा आघात लगा, वह विक्षुब्ध हो गया और एक दिन आवेश में आकर माता की मूर्ति को यह कहते हुये कि ''तू मेरे पुत्र की रक्षा नहीं कर सकी तो दूसरों की रक्षा क्या करेगी?'' कन्दरा में छुपा दिया और दरवाजे पर पत्थर रखकर उसे इन्द्रजाल से बाँध दिया, ताकि उसे कोई निकाल न पाये । माता जी का मंदिर मूर्ति विहीन हो गया परन्तु चण्डीबड़ में लगने वाला साप्ताहिक बाजार और साल में एक बार लगने वाली मंडई पूर्व की भाँति निरंतर जारी रहा।

इस तरह बहुत दिन गुजर गये। मंदिर में माता की मूर्ति नहीं होने के बाद भी लोग उनकी जिस प्रकार से पहले पूजा करते थे उसी प्रकार से पूजा, जातरा, बलि आदि देकर माता की पूजा करते थे, मगर सबके मन में माता की मूर्ति नहीं होने का दुःख था। सभी के मन में एक ही विचार था कि माता की मूर्ति को किस तरह से कन्दरा से निकालकर पुर्नस्थापित किया जाय। लोगों ने कई तरह से प्रयास किया पर कोई भी सफल नहीं हो पाया। लोगों ने विचार किया कि साप्ताहिक बाजार स्थल और मेला के स्थल को परिवर्तित किया जाय। इसके लिये देव आज्ञा की आवश्यकता थी। देव बैठा कर देव पूछाया गया और देवता के बताये अनुसार साप्ताहिक बाजार और मेला स्थल कुम्हार पारा चौक में लाया गया। इस स्थान पर बहुत वर्षों से साप्ताहिक बाजार और मेला लगता रहा। इस प्रकार साप्ताहिक बाजार और मेला बहुत वर्षों तक कुम्हार पारा में लगता रहा।

नारायणपुर के गढ़ पारा में स्थापित मावली माता के आगमन की कई किवदन्तियाँ प्रचलित है, जिसे यहाँ निवासरत जाति और जनजाति वर्ग के लोग अलग–अलग

तरह से सुनाते है। पारद खेलना जनजाति समाज की एक परम्परा है जिसमें वे गाँव के द्वारा लिये गये किसी सामूहिक निर्णय की सत्यता की परख करते हैं। ऐसे ही एक कहानी में कुछ उत्साही लोग करेल घाटी की ओर पारद खेलने गये थे। पारद खेलने के दौरान उन्होंने एक जामुन के वृक्ष के नीचे एक मूर्ति देखी। उन लोगों ने अपने गाँव वापस लौटकर गाँव वालों को बताया। गाँव के लोगों ने विचार करने के उपरान्त देव बैठा कर, पूछा तब देवता ने उस मूर्ति को एक नया मंदिर बनाकर स्थापित करने को कहा और देवाज्ञा से उसे लाकर गड़पारा में मंदिर बनाकर स्थापित किया गया। मूर्ति करेल घाट से लाई गई थी और देवता ने भी बताया था कि यह मावली माता की मूर्ति है। इस तरह मावली माता का आगमन होना बताया जाता है।

नारायणपुर क्षेत्र के मुरिया और माड़िया जनजाति मावली माता को अपनी देवी मानते है नारायणपुर में आने के पीछे अपनी अलग कहानी बताते हैं। उनके अनुसार एक बार क्षेत्र में बहुत ही भीषण अकाल पड़ा था। लोगों के पास खाने के लिये कुछ नहीं था। यह वह समय था जब लोग एक–दूसरे की सहायता करते हुये सामाजिक समरसता बनाये हुये जीवन–यापन करते थे। उस अकाल के समय हल्बा जनजाति के लोगों ने माड़ के लोगों से सहायता माँगी थी और माड़ के लोगों ने उनकी अपने तरीके से भरपूर सहायता की थी। उन्होने कोदो और मंडिया आदि अनाज दिया था। माड़ के लोगों का कहना है कि इसी अनाज में छुपाकर हल्बा जनजाति के लोग हमारी माता जी के 'सिंगराम' को ले गए व गढ़पारा नारायणपुर में स्थापित किये। इस कहानी से उलट हल्बा समाज के लोग इस बात को स्वीकारते हैं कि अकाल के समय माड़ के लोगों ने हमारे समाज के लोगों की सहायता की थी मगर सिंगराम छुपाकर लाने की बात झूठी है। माड़ के लोगों ने जो अनाज का पात्र हमारे लोगों को दिया था उसी में से एक में माता जी का सिंगराम था, जिसे अनजाने ही हमारे लोगों को दे दिये थे, जिसे लाने के बाद देव पूछाया गया और माता की अनुमति के बाद ही इसे हमारे लोगों के द्वारा स्थापित किया गया।

नारायणपुर में स्थापित मावली माता को 'मुचकी मावली' के नाम से भी जाना जाता है। मावली माता बस्तर में निवासरत सभी जाति और जनजाति वर्ग की आराध्य देवी हैं और उन्हें यहाँ का सर्व समाज उनके कार्यों से या स्थान का नाम देकर मान देता है। नारायणपुर की माता को 'मुचकी' मावली (मुस्कुराने वाली मावली माता) के नाम से जानते हैं। बताते हैं कि जब नारायणपुर के गढ़ गुडरा के मंदिर के माता को कन्दरा में डाल कर इन्द्रजाल से बहेटी पातर ने बाँध दिया और तब से उसे कोई निकाल नहीं पाया। उसी काल में पहाड़ी मंदिर के पीछे 'मुचकी' मावली माता का अवतरण हुआ था। वे एक आम वृक्ष के नीचे विराजित थीं और आने–जाने वाले लोगों को देखकर मुस्कुराती थी, इसका आशय यह है उस स्थान में पहुँचने वालों को लगता था कि कोई उन्हें देखकर मुस्कुरा रहा है। इस बात को बहुत से लोगों ने महसूस किया और यह जन मानस चर्चा का विषय बन गया। गाँव के बुजुर्गों ने विचार कर देव बैठाकर देवता से पूछा कि यह क्या है? सिरहा पर आरूढ़ देवता ने बताया कि "ऐ मुचकी मावली है' मान पाने आई है, इसका एक मंदिर बनाकर इसकी स्थापना करो।''

इस प्रकार देवता के बताए अनुसार गढ़पारा में माता का मंदिर बनाया गया और उन्हें विराजित किया गया।

गढ़पारा में माँ मावली की मूर्ति स्थापित करने के साथ एक बहुत बड़ा जातरा किया गया। इसी जातरा में माता से मेला और साप्ताहिक बाजार को गढ़पारा में लाने की अनुमति माँगी गई। माता से अनुमति मिलने के बाद साप्ताहिक बाजार और मेला स्थल को कुम्हार पारा से गढ़पारा, वर्तमान के बुधवारी बाजार स्थल पर लाया गया। उस समय राजा दलपत देव का शासन था। जिनका शासन काल सन् 1731 ई. से सन् 1774ई. इतिहास में वर्णित है।

राजा दलपतदेव के शासन काल के बाद बस्तर का इतिहास में बहुत उथल–पुथल मचा। सन् 1875 में राजा भूपाल देव का आगमन नारायणपुर हुआ। राजा भूपालदेव बहुत ही धार्मिक प्रवृति के व्यक्ति थे, उन्होंने नारायणपुर के सभी मंदिर, माता मावली मंदिर, शीतला मंदिर और कोटगुढ़िन मंदिर में विधिवत पूजा की थी। उस समय कोटगुढ़िन माता के पुजारी केशरी नाईक हुआ करते थे, वे माता के प्रमुख सिरहा भी थे। राजा को अपने सेवकों से ज्ञात हुआ था कि केशरी नाईक बहुत सिद्ध व्यक्ति हैं और उन पर साक्षात देवी आरूढ़ होती है। राजा ने केशरी नाईक को बुलाकर कोटगुढ़िन माता के साक्षात दर्शन करने की इच्छा प्रकट की। केशरी नाईक ने राजा को समझाया कि ''हे राजन इस कलयुग में माता का साक्षात दर्शन देना सम्भव नही है और यदि देवी सिरहा के ऊपर पूर्ण रूप से आरूढ़ होती है तो सिरहा की खैर नहीं है, ऐसा हुआ तो मेरी मृत्यु निश्चित है'' राजा ने विश्वास नहीं किया और साक्षात दर्शन करने की जिद करने लगे। अचानक केशरी नाईक के शरीर में माता अपने सम्पूर्ण अंश के साथ आरूढ़ हुई और उनकी छाती फट गई। खून की धारा बहने लगी और केशरी नाईक का प्राणान्त हुआ। उनका मृत्यु स्तम्भ कोटगुड़िन माता मंदिर के किनारे स्थापित किया गया, जो वर्तमान में भी देखा जा सकता है।

आदिकाल से मावली माता के पुजारी हल्बा जाति के पात्र गोत्र लोग हुआ करते थे। बाद में पात्र गोत्र के हल्बा अपनी पारिवारिक परेशानी के चलते माता मावली की पूजा का अधिकार नारायणपुर के लोगों की सहमति से अपने बेटी दामाद अजरसाय बेलसरिया को सौंप दिया। इसके बाद से माता की पूजा बेलसरिया गोत्र के हल्बा लोग करते आ रहे हैं। अजरसाय बेलसरिया अपने जीवन काल तक माता की सेवा करते रहे, उनकी मृत्यु के बाद उनके पुत्र ढोला राम बेलसरिया हुये, उन्होंने ने भी अपने जीवन भर माता की पूजा की। ढोला राम की मृत्यु के बाद उनके मंझले पुत्र दुकारू राम को पुजारी बनाया गया, जिनकी अल्पकाल में ही मृत्यु होने से ढोला राम के जेष्ठ पुत्र रैपाल सिंह को पूजा करने का अधिकार मिला परन्तु इनकी मृत्यु भी बहुत जल्दी हो गई, इसके बाद ढोला राम के सबसे छोटे पुत्र दुआरू राम बेलसरिया अपने जीवन काल तक माता की पूजा करते रहे। दुआरूराम की मृत्यु के बाद उनके पुत्र मानसिंह बेलसरिया माता के पुजारी हुये, जिन्होंने अपने जीवनकाल में माता की सेवा की। वर्तमान में पुजारी के रूप में मानसिंह पुजारी के पुत्र रामकुमार बेलसरिया माता की सेवा कर रहे हैं।

जब अन्तागढ़ को तहसील का दर्जा दिया गया, तब

नारायणपुर अन्तागढ़ तहसील के अन्तर्गत आता था। उस काल में मेला संचालन का जिम्मा प्रशासन ने अपने हाथों में ले लिया। इस समय तक आवागमन बढ़ जाने से और मजदूर व्यापारी के आने से मेला का विस्तार हो रहा था। लोग स्वयं महसूस कर रहे थे कि मेला स्थल गढ़पारा छोटा हो रहा है। इन सब कारणों को देखकर प्रशासन ने मेला स्थल को तालाब के किनारे बखरूपारा के पास लगाये जाने की पहल की। मेला स्थल परिवर्तन के लिये देवाज्ञा की आवश्यकता थी। इसके लिये प्रशानिक अधिकारियों ने स्वयं पहल किया और उस समय के ग्राम प्रमुखों के साथ देव प्रमुखों से विचार विमर्श किया। इस समय ग्राम प्रमुख धरमा पातर, नीलकण्ठ देवांगन, मंगलराम माझी, रामधर बहीदार संवला राम मुकद्दम आदि थे और देव प्रमुख शीतला माता के पुजारी दुकारू राम नाईक, मावली पुजारी दुकालू राम बेलसरिया तथा कोटगुढ़िन माता , गढ़िया बाबा, भीमादेव के पुजारी मदनलाल पटेल थे, इन सबकी सहमति से मेला और साप्ताहिक बाजार स्थल वर्तमान मेला स्थान पर लाया गया। तब से आज तक मावली मंडई नारायणपुर के इसी स्थान पर हो रही है।

परम्परागत परगना व्यवस्था

जिला नारायणपुर 9 परगनों में विभक्त है। प्रत्येक में लगभग 30 से 40 गाँव आते हैं। नारायणपुर के दक्षिण–पश्चिम में 'करगाल परगना' है, इसी के अन्तर्गत यह मंडई भरती है। करगाल परगना के दक्षिण में 'बड़दाल परगना' है। नारायणपुर के उत्तर में 'दुगाल परगना' और इसके बाद 'कोलोर परगना' के कुछ गाँव और गढचिरोली तक 'जेटिन परगना' के गाँव आते हैं। नारायणपुर के उत्तर–पूर्व में 'बारा जोड़ियान परगना' है, पूर्व में बेनूर परगना, दक्षिण–पूर्व में 'छोटेडोंगर परगना' और इसके बाद के सभी गाँव 'ओरछा परगना' के अन्तर्गत आते हैं। इन नौ परगनों में निवास करने वाले आदिवासी तथा अन्य जाति वर्ग के लोगों का नारायणपुर में आना प्रारम्भ होने के साथ ही मंडई का माहौल बनने लगता है। मेला स्थल के आस–पास के सभी जगहों पर ये लोग आकर डेरा डालते हैं। मेला स्थल नारायणपुर के बखरूपारा और बंधुआ तालाब के मध्य है। इस स्थान में निस्तार की सारी सुविधा है, केवल इन्हें जलाने के अपने साथ लकड़ी लेकर आना पड़ता है। नारायणपुर आने वाले लोग सबसे पहले अपने–अपने सगा–सम्बन्धियों के यहाँ, अपने परिचितों के यहाँ, इसके बाद आस–पास सभी स्थानों में डेरा डालते है। आदिवासी समाज के लिये इस मंडई का आकर्षण बहुत अधिक है। वे इस मेले में भाग लेने के लिये पूर्व से तैयारी तो करते हैं, यहाँ आने के लिये 30 से 40 कि.मी. तक पैदल चलते हैं। अबूझमाड़ के दूर–दराज के क्षेत्रों से यहाँ आने के लिये आवागमन के साधन नहीं हैं। अबूझमाड़ के अधिकांश लोग पैदल चलकर यहाँ आते हैं। यहाँ प्रायः नारायणपुर के प्रत्येक क्षेत्र से लोग आते हैं। अपना डेरा जमाते हैं खाते–पीते हैं, पारम्परिक साजो–श्रृंगार करते हैं, नाचते हैं गाते हैं और यही सब देखने के लिये सारे विश्व से सैलानी यहाँ आते हैं। हर मेले में फ्रांस, जर्मनी, इटली, ब्रिटेन, स्विट्जरलैंड आदि स्थानों से विदेशी पर्यटक और भारत के विभिन्न स्थानों से पर्यटक व शोधार्थी आते हैं। यही कारण है कि यह मंडई विश्व प्रसिद्ध मावली मंडई कहलाता है।

मेला-मंडई

मेला–मंडई आदिवासी समाज की लोक आस्था का पर्व है। बस्तर में ये लोक आस्था के पर्व किसी न किसी देवी के नाम से आयोजित कर आदिवासी समाज अपने लोक देवताओं के प्रति अपना कृतज्ञता अर्पण करता हैं। उन पर अगाध श्रद्धा रखता है सदैव उनकी सेवा करके उपकृत होता है। बस्तर की मंडई वस्तुतः देवियो की जातरा है। जिस जगह जातरा में देवियों की विशेष पूजा के साथ उनके कुल के देवताओं की सामूहिक पूजा होती है तथा आवश्यक वस्तुओं का लेन–देन होता है उसे ही ''मंडई'' कहा जाता है। विशेष पूजा से आशय है कि जिस पूजा में उसके अन्तर्गत आने वाले देवी–देवताओं की सामूहिक पूजा की जाती है। बस्तर की लोक देवियाँ गाँव की ''गुड़ी'' (मंदिर) में स्थापित होती है। जहाँ सप्ताह में प्रत्येक मंगलवार और शनिवार को उनकी पूजा का विधान है। पुजारी उन दो दिनों में देवियों की पूजा करने के बाद गाँव वालों द्वारा लाये गये सेवा चॉवल, फूल, नारियल आदि अर्पण करता है। इसे गाँव के लोगों के द्वारा ''सेवा जाना'' कहा जाता है। प्रायः इन्हीं देवियों के नाम से उस गाँव की ''मंडई'' होता है। इन देवियों का ''जातरा'' गाँव की ''मंडई'' के रूप में होता है।

बस्तर में ''जातरा'' का अर्थ ''अपने देवी–देवताओं को प्रसन्न करना'' है। आदिवासी समाज की मान्यता है कि उसके लोक देवता अपने आँगन में जितनी प्रसन्नता से खेलेंगे, उनके गॉव में उतनी ज्यादा खुशियाँ आऐंगी और साल भर सुख–समद्धि रहेगी। वह अपने देवी–देवताओं को प्रसन्न करने के लिये उनकी पूजा करते है, उन्हें बलि अर्पित करते हैं। उनकी आराधना करते हैं, बाजा बजाते हैं, गीत गाते हैं, नृत्य करते हैं। जिससे उनके देवतागण प्रसन्न हों और अपने आँगन में खेलें। नृत्य, गीत, संगीत और आस्था का संयुक्त आयोजन ही ''जातरा'' है। जातरा में आदिवासी युवक–युवतियाँ गीत गाकर नृत्य करते हैं। विशेष प्रकार का लोक वाद्य ''ढोल'' बजाया जाता है और साथ में ''मोहरी'' ''नंगाड़ा'' बजाकर देवों को खेलाया जाता है। आदिवासियों के इन क्रियाओं से देवगण प्रसन्न होकर स्वमेव ही अपने आँगन में खेलते हैं। साल में एक बार देवताओं की विशेष पूजा –''जातरा'' करने का मुख्य प्रयोजन होता हैं। आदिवासी समाज जातरा का आयोजन

बड़ी श्रद्धा से साल में एक बार अनिवार्यतः करता है।

मेला–मंडई भी देवियों का जातरा हैं। ''जातरा''केवल उन्हीं गाँवों आयोजित होता हैं, जिनमें माताओं की गुडी (मंदिर) स्थापित होती है। आदिवासी बाहुल्य गाँवों में मेला–मंडई को आयोजित करने के लिये सर्व प्रथम माता के अन्तर्गत आने वाले देवी–देवताओं के गाँवों के सिरहा, पुजारी, पटेल, गांयता की बैठक आयोजित कर उसमें मेला–मंडई आयोजित करने की तिथि का निर्धारण किया जाता है। यह तिथि प्रायः उसी महीने के आस–पास होती है, जिसमें पूर्व के वर्षों में मेला आयोजित की गई थी। तिथि निर्धारित होने के बाद देवी–देवताओं का आह्वान किया जाता है। मेला एक दिन का माना गया हैं परन्तु यह तीन दिन तक भरता है। पहले दिन देवताओं का आगमन होता है, दूसरे दिन मुख्य मेला होता हैं, जिसमे देवताओं की परिक्रमा होती है और तीसरे दिन देवी–देवताओं का मान–सम्मान करके विदाई दिया जाता है।

बस्तर में मेला–मंडई का आयोजन उस परगने के ''मंडादेव'' (मुख्य देवता) का जातरा हो जाने के पश्चात्

होता है। मुख्य देवता के जातरा को ''ककसाड़'', या ''करसाड़''कहा जाता है। एक प्रकार से मुख्यदेव के जातरा में उसके अन्तर्गत आने वाली देवियों के जातरा या मंडई के लिये अनुमति ली जाती है। इसके पश्चात ही बैठक कर तिथि तय की जाती है। आहवान के बाद देवी–देवताओं का आगमन होता है। बस्तर में होने वाले जातरा वस्तुतः सगोत्री देवी–देवताओं की सम्मलित पूजा होती है। इन जातरा में मुख्य देवता के सगा– सम्बन्धियों का आहवान होता है और उनके सिरहा, पुजारी, गांयता पूर्व से तिथि निर्धारण किये होते हैं। सगा का अर्थ उस देव के जिस देवी का मंडई आयोजित है, उनकी विषम गोत्रीय देव जैसे उनकी लड़की, बहन, लड़की की पुत्र–पुत्री, बहन के पुत्र–पुत्री इन सबके पति सगा के अन्तर्गत आते हैं। इसी तरह मुख्य देवता के भाई, पुत्र, उनका पुत्र–पुत्री सभी सम्बन्धी के अन्तर्गत आते हैं इन सबका आहवान किया जाता है। सभी देवता अपने दादी, नानी, मामी, फूफी के जातरा या मंडई में सम्मलित होने के लिये आते हैं।

जातरा के पूर्व निमंत्रित देवों का आगमन शाम तक होता है। देवताओं के विग्रह, ''डोली'' देवियों के विग्रह ''आंगा'' देवों के विग्रह के साथ उनके पुजारी, सिरहा, और गाँव के लोग देवताओं का ध्वज लेकर आते हैं, उन्हें यथा योग्य स्थान देकर सम्मान से विराजित किया जाता है। इन सबके सामने दीप जलाया जाता है, देवताओं के पुजारियों के साथ देवी का पुजारी सब आगत देवों की पूजा करता है। पूजा के साथ ही इस बात का परीक्षण किया जाता है कि वह देव अपने सम्पूर्ण शक्ति के साथ आये हैं या नहीं।

इसके लिये देवता के सामने एक चूजे को चॉवल चुगाया जाता है, यदि चूजे ने चॉवल चुग लिया तो माना

जाता है कि वे देव अपनी पूरी सम्पूर्णता के साथ आये हुये हैं। यह प्रकिया आगत सभी देवों के साथ की जाती है। देवताओं के सामने रखे चॉवल को चूजा नहीं चुगता या नहीं खाता तब यह माना जाता है कि देव किसी कारण से नाराज है। नाराज देव के सिरहा को देव बैठा कर पूछा जाता है कि वह नाराज क्यों है? उसके बताने पर मनाने के उपाय किये जाते हैं। यह प्रायः बलि देने की मनौती होती है।

देवताओं के साथ आये हुये गॉव के लोग रात्रि के भोजन की तैयारी करते हैं। इस रात गुड़ी (मंदिर) के आँगन में आगत देवताओं के सम्मान में ढोल बजाकर नृत्य किया जाता है। ढोल बजने के साथ ही वहाँ उपस्थित महिलायें कतारबद्ध होकर गाना गाते हुये नृत्य करने लगती हैं। इस गोंडी लोक गीत को "पेन पाटा'' कहा जाता है, यह देवताओं का आहवान गीत होता है। इस समय मोहरी, नंगाड़ा आदि सहवाद्य भी बजाये जाते हैं। गीत–नृत्य और संगीत से बहुत ही पवित्र वातावरण बनता है। इस समय वहाँ उपस्थित देवों के सिरहाओं के ऊपर देवता की सवारी आती है वे मोहरी नंगाडा के सामने जाते हैं, तब उनका ''पाड़'' (धुन) बजाया जाता है और वे अपने ''पाड़'' में खेलते हैं। प्रत्येक देवताओं का अपना पाड़ (धुन) होता है। जिसे मोहरी बजाने वाला जानता है और देव के सामने आते ही बजाने लगता है। ये देवता बाद में महिलाओं के कतार में शामिल होकर भी नृत्य करते हैं। इसी समय आस–पास के गाँव के घोटुल से आये हुये युवक–युवतियाँ मंदिर से दूर किसी खुले स्थान पर कोकरेंग नृत्य करते हैं। कोकरेंग नृत्य सुबह मुर्गा के बाँग देने तक चलता रहता है। सुबह मुर्गे के बाँग देने तक जारी रहने के कारण ही इसे ''कोकरेंग'' (कोक का अर्थ मुर्गा और रेंग का बाँग देना होता है) कहा जाता है।

दूसरे दिन सभी गांयता, पुजारी, सिरहा और गाँव के लोग मंदिर में आते हैं और सभी देवताओं की पूजा करते हैं। गाँव के लोग अपने देवताओं की सेवा में आते हैं। दोपहर को भोजन के उपरान्त एक बार फिर से मंदिर के आँगन में मोहरी और नंगाड़ा अदि वाद्य बजाया जाता है और आगत देवताओं के सिरहाओं के साथ गाँव के सिरहाओं के ऊपर देवता की सवारी आती है, सभी अपने–अपने धुन पर खेलते हैं। यही इस देवी जातरा या मंडई के मनाने का मुख्य आकर्षण होता है। लगभग 3 बजे दोपहर के करीब सभी देवगण मुख्य देवी के साथ मंडई परिक्रमा के लिये जाते हैं। पहले गाँव का कोटवार राह बनाता चलता है, उसके पीछे नंगाड़ा बजाने वाले तथा उनके पीछे देवतागण चलते हैं। सभी देवी–देवताओं द्वारा मंडई की दो परिक्रमा करने के बाद तीसरी परिक्रमा में मंडई के मध्य एक निश्चित स्थान में

देवी के विग्रह को रखकर फूल और धान लाई का निछावर करते हैं और उस स्थान से सभी देवी–देवता वापस लौट कर मंदिर में आते हैं। यहाँ पुनः एक बार सभी देवता अपने धुन पर खेलते हैं, गाँव के लोग अपने प्रसन्न देवताओं को खेलते हुये देखते हैं और प्रसाद लेकर अपने–अपने घर लौटते हैं।

तीसरे दिन आगत सभी देवताओं को भेंट, बलि देकर विदाई दी जाती है। विदा होने के बाद वे देवतागण मंडई आयोजित होने वाले गाँव में नहीं ठहरते, उनके साथ आये लोग अपना भोजन भी उस गाँव की सीमा से बाहर जाकर बनाते, खाते है। इस प्रकार के भोजन में शुचिता का भाव होता है। मंडई इस गाँव में दूसरे दिन भी चलता रहता है। इसे बासी मंडई कहा जाता है।

नारायणपुर मावली मंडई

बसन्त ऋतु आगमन के साथ ही बस्तर के विभिन्न स्थानों में मेला–मंडई का आयोजन का क्रम प्रारम्भ हो जाता है। मंडई के आयोजन का एक क्रम और तिथि भी निर्धारित है। इस क्रमानुसार मेला आयोजित किये जाने से लोगों को पूर्व से ही इसकी जानकारी हो जाती है और वे व्यापारी जो सभी मेला में व्यवसाय करते हैं उन्हें भी सुविधा होती है। नारायणपुर में मंडई महाशिवरात्रि के पहले बुधवार को आयोजित होता है। इस मंडई का आयोजन, तिथि से नहीं दिन से किया जाता है इसका कारण है कि मेले का दिन निश्चित है और तिथि भी जिससे आसानी होती है। यह मंडई सोमवार से सोमवार आठ दिनों तक भरती है मगर मुख्य मंडई बुधवार को होता है। बुधवार के दिन देवी परिक्रमा होता है और मंडई का विधिवत शुरूआत होता है। देव समिति, नारायणपुर द्वारा मंडई के लिये तिथि का निर्धारण करके प्रशासन को अवगत करा दिया जाता प्रशासन द्वारा मंडई हेतु आयोजन समिति आदि बनाकर 'नारायणपुर मावली मंडई' के कार्यक्रम को सम्पन्न कराने की तैयारियाँ की जाती है। है। जिला प्रशासन के द्वारा इस तिथि को स्थानीय अवकाश घोषित किया जाता है।

जिला नारायणपुर के मुख्यालय में आयोजित होने वाले मेले को 'मावली मंडई' नाम दिया गया है। यह मेला माता मावली के नाम से होता है। मावली माता बस्तर की आराध्या देवी माता दन्तेश्वरी का ही एक रूप मानी जाती है, जिसे बस्तर में निवासरत सभी वर्ग के लोग पूजते हैं। राजा अन्नमदेव आने के पूर्व नल वंशीय और नाग वंशीय राजाओं के समय बस्तर को चक्रकोट कहा जाता था। उस समय चक्रकोट की आराध्या देवी माता मावली हुआ करती थी। राजशाही के उस दौर में माता को मणिकेश्वरी नाम से जाना जाता था, तब भी चक्रकोट की प्रजा माता को 'मावली माता' के नाम से ही पूजती थी माता मणिकेश्वरी का संक्षिप्त नाम 'माता मावली' है। जानकारों का कहना है कि जब राजा अन्नमदेव ने चक्रकोट के अन्तिम गढ़ बारसूर पर विजय प्राप्त किया तब उनके द्वारा दन्तेवाड़ा में माता दन्तेश्वरी का मंदिर बनाकर वहाँ उनकी मूर्ति स्थापित किया था। विजयी राजा अन्नमदेव के द्वारा स्थापित देवी माता दन्तेश्वरी को उस समय के चक्रकोट निवासी माता मणिकेश्वरी/माता मावली मान कर ही उसी श्रद्धा से पूजने लगे, जिससे वह सम्पूर्ण बस्तर की आराध्या देवी बन गई।

'मावली' शब्द संस्कृत के 'मौली' धातु से उद्धृत है, जिसका शाब्दिक अर्थ 'मूल में' होता है। अपने अर्थ के साथ ही माता मावली के प्राचीनता का बोध होता है या यह भी माना जा सकता है कि माता पुराने समय से ही बस्तर की आराध्या देवी हैं, इसमें कोई संदेह नहीं और वर्तमान बस्तर में भी वे सभी की आराध्य देवी के रूप में स्थापित हैं। बस्तर में निवासरत समस्त जाति और जनजाति, जिनमें मुरिया, माड़िया, हल्बा जनजाति और कोष्टा, मरार, कलार, कुम्हार, धाकड़, नाई, धोबी, घड़वा आदि सभी माता मावली को अपनी आराध्या देवी मानते हैं। मावली माता के प्रति बस्तर के लोगों की आस्था और विश्वास का कारण माता के द्वारा समय–समय पर अपने गढ़ की रक्षा के लिये किया गया कार्य है। लोगों की मान्यता है कि माता मावली के ये सभी विभिन्न रूप हैं, जिन्हें यहाँ निवासरत आदिवासी समाज पूजा करता है। वास्तव में माता मावली के ये नाम उनके कार्यों का प्रतिरूप है। माता मावली को बस्तर के प्रत्येक क्षेत्र में उनके कार्यों से जाना जाता है, यहाँ प्रसंगवश माता मावली द्वारा नारायणपुर में किये गये कार्यों का वर्णन किया जा रहा है।

माता मावली द्वारा नारायणपुर गढ़ की रक्षा की गई थी। माता के द्वारा किये गये चमत्कार व उपकार को नारायणपुर के निवासी आज भी बड़ी श्रद्धा से याद करते हैं। एक घटना इस प्रकार है, नारायणपुर से उत्तर में लगभग 13 कि.मी. की दूरी पर 'मावली मोड़' नामक स्थान है। उन दिनों उत्तर की ओर से अंग्रेज और मराठा सैनिकों के द्वारा आक्रमण होने की सम्भावना थी, इस संकट के अशंका से नारायणपुर के लोग अनभिज्ञ थे। माता मावली को इस खून–खराबे का आभास हो गया था । उन्होंने 'मावली मोड़' पर एक सुन्दर बाजार की रचना की। बाजार में तरह–तरह के फल और पकवान बिकने के लिये रखे हुये थे। सैनिक बहुत दिनों से चल रहे थे, उन्हें थकान और भूख दोनों ही लगी थी। बाजार देखने के बाद उनकी भूख और बढ़ गई थी। सबने पास ही बहने वाली नदी में स्नान किया और बाजार से खाने की सामग्री ले कर खाया। खाने के बाद आराम करने लगे। इस बाजार से जितने भी लोगों ने खाने की सामग्री लेकर खाया था, केवल एक व्यक्ति को छोड़कर सभी की मौत हुई, जो बाद में स्नान करने गया था, जब वह स्नान कर लौटा तो अपने साथियों को मृत देखकर घबराया। उसने पास के 'कहुआ' वृक्ष (अर्जुन वृक्ष) में लिखा कि इससे आगे खतरा है। इस घटनाक्रम को आज भी अंचल के लोग याद करते है। जहाँ बाजार भरा था, उस स्थान को 'मावली मोड़' के नाम से जाना जाता है। इस स्थान में माता जी के पद चिन्ह प्रमाण स्वरूप एक पत्थर में अंकित है। यहाँ माता का स्थान रावघाट की तराई में स्थित है, वर्तमान में एक पक्का मंदिर का निर्माण किया गया है और इस स्थान में माता की पूजा का अधिकार एड़का के कुम्हारों का है, मावली माता नारायणपुर की आराध्य देवी है, किसी पर किसी प्रकार संकट होने से वह मावली माता से गुहार करते हैं और माता की कृपा से संकट का निवारण हो जाता है। माता का मुख्य स्थान नारायणपुर से दक्षिण–पश्चिम में 12 कि.मी. में स्थित 'करील घाटी' में है। यहाँ पर माता जी का एक छोटा सा मंदिर है। माता मावली के पूजा का अधिकार यहाँ मुरिया जनजाति के 'गोटा गोत्र' के लोगों को है। प्रत्येक वर्ष माता का जातरा यहाँ सम्पन्न होता है। यह जातरा माता के मंडई से अलग किया जाता है। आदिवासी समाज का मान्यता है कि माता की मंडई पूर्व काल से ही उनके स्थान से अलग भरती रही है। माता के मुख्य स्थान पर माता का मान नहीं होता है, इसलिये सबसे अन्त में यहाँ जातरा का आयोजन किया जाता है। मावली माता को करील घाटी में स्थान होने के कारण माड़ के लोग इन्हें अपनी इष्ट देवी मानते हैं और मैदानी क्षेत्र के मुरिया और हल्बा जनजाति के साथ अन्य लोग भी अपनी आराध्य देवी मानते हैं और जातरा में सम्मलित होते हैं।

नारायणपुर की मावली मंडई इस क्षेत्र का सबसे बड़ा लोकोत्सव है। यह एक सामूहिक आयोजन है जिसमें सामाजिक संस्था, प्रशासन, देव समिति सभी अपनी भागीदारी निभाते हैं और आयोजन को सफल बनाते हैं। नारायणपुर में रहने वाले प्रत्येक परिवार अपने और से भी अपनी तैयारी करता है। मावली मंडई नारायणपुर का सबसे बड़ा त्यौहार है, यही कारण है कि इसे वे सबके साथ मनाकर आनन्द उठाना चाहते हैं। यहाँ निवासरत लोगों के लिये साल में एक बार जब वे अपने कुटुम्ब और सगा–सम्बन्धी के साथ जुटते हैं, वह अवसर अपने गाँव की मंडई का होता है, जब उसके सगा–सहोदर, मीत–मीतान आमंत्रित होते हैं और आपस में मिलकर 'नारायणपुर मावली मंडई' रूपी त्यौहार का आनन्द लेते हैं।

नारायणपुर मावली मंडई के लिये सब लोग अपने–अपने रिश्तेदारों को पूर्व में ही निमंत्रण देते हैं। अपने सगा–सम्बन्धी के स्वागत के लिये वे पूर्व से ही तैयारी करते हैं, अपने घर की लिपाई–पोताई करते हैं, मेहमानों के लिये बैठने, सोने के लिये घर के आँगन में 'छापर' (मंडप) बनाते हैं। यह सब तैयारी नारायणपुर के आस–पास सभी गाँव के लोग करते हैं। सबको मालूम होता है कि उसके रिश्तेदार और मीत–मीतान अवश्य आयेगें, इसलिये यह तैयारी की जाती है।

नारायणपुर की मावली मंडई इस क्षेत्र की सबसे बड़ी मंडई है, जिसमें भाग लेना इस क्षेत्र के लोगों के लिये गौरव की बात है। इसके लिये वह साल भर इन्तजार करते हैं। साथ में विशेष सामान लेने के लिये बचत भी करते हैं। इनके जीवन में मंडई का काफी महत्त्व है, क्योंकि उसके जरूरत के सामान उसे मंडई में ही मिलते हैं। जब आवागमन का कोई साधन नहीं था, व्यापार बैलगाड़ियों से होता था और हाट–बाजार, मेला–मंडई भी कम गाँवों में भरती थी, उस समय इस क्षेत्र के लोगों को आवश्यक वस्तु की खरीददारी में काफी कठिनाई आती थी, तब इन मेला–मंडई का बेहद महत्व था। आज भी उन क्षेत्रों के लोग जिनके गाँवों तक जाने का साधन नहीं है और हर जरूरत के सामानों के लिये उन्हें शहर तक आना पड़ता है, वे लोग साल भर धन एकत्रित कर रखते हैं ताकि मंडई में ही अपने जरूरत के सामान जैसे कपड़ा, बर्तन, सोना–चाँदी, श्रृगांर के सामानों की खरीददारी कर सकें।

बस्तर के लोग प्रकृति आधारित जीवन–यापन करते हैं। सभी का जीवन स्तर समान होता है, वे आगामी कार्यों और आवश्यकता के अनुसार पैसा बचत कर मेला–मंडई में खरीददारी करते हैं। बस्तर में निवासरत परिवार का सबसे बड़ा सामाजिक कार्य शादी–विवाह होता है, जिसके लिये उन्हें कपड़ा, बर्तन, सोना–चाँदी खरीदने की आवश्यकता होती है। साल भर पहले से इसकी तैयारी करता रहता है, और मंडई में इन वस्तुओं को खरीदता है। इसलिये बस्तर का अधिकतर विवाह मेला–मंडई सम्पन्न होने के बाद ही होते हैं। कोई भी सामाजिक कार्य के लिये पूर्व में ही कह दिया जाता है कि माहला (सगाई) या विवाह होली मनाने के बाद होगा। फाल्गुन माह में होली होता है, इस समय तक बस्तर के सम्पूर्ण क्षेत्रों में मेला–मंडई सम्पन्न हो चुका होता है। दन्तेवाड़ा की फागुन मंडई अन्तिम मंडई होता है।

बस्तर में निवासरत सभी जाति समुदाय के लोगों का जीवन सरल और सादगी भरा होता है, केवल कपड़ा, नमक और तेल के लिये वे व्यवसायी समाज से जुड़ते हैं। यहाँ निवासरत लोगों की आवश्यकताएँ भी सीमित होती है। ये अपने खाने के लिये अपने खेतों में धान, कोदो, कुटकी, मंडिया, उड़द, अलसी, कुल्थी तथा अपनी बाड़ी में साग–भाजी उगाते हैं। प्राचीन समय में जब मुद्रा का चलन नहीं था उस समय वस्तु विनिमय–हुआ करता था। एक–दूसरे से अपनी चीजें आदान–प्रदान कर अपना जीवन व्यतीत करते थे। वस्तु विनिमय का यह दौर बहुत लम्बे समय तक जारी रहा।

आदिवासी समाज के लोग वनोपज संग्रहण कर दुर्लभ वनोपज को किसी विशेष समय जैसे मेला–मंडई में बेचकर अधिक क्रय शक्ति प्राप्त कर अपनी आवश्यकता के सामान खरीदते। इस तरह मेला–मंडई उनके लिये अधिक महत्त्वपूर्ण बनते गया। हर मंडई में दूर–दूर से लोग आने लगे, एक ही स्थान पर वह सभी लोग से मिलने लगा और

सूचना के आदान–प्रदान के साथ सबसे सुख–दुःख बाँटने लगा। धीरे–धीरे मेला–मंडई में उसके लिये किसी उत्सव जैसा माहौल बनने लगा और वह उसमें सह–परिवार भाग लेने लगा। बस्तर में मंडई–देवी जातरा होने से उसके साथ आदिवासी समाज की आस्था भी जुड़ती चली गई और मंडई उसके लिये और भी महत्वपूर्ण हो गया। इस तरह मेला–मंडई का स्वरूप बनता और बदलता गया। आदिवासी समाज की भागीदारी बढ़ती चली गयी। बस्तर के लोगों की आवश्यकता बढ़ती गई और मेला में तरह–तरह के लोग आने लगे। आदिवासी समाज नये लोग, नई वस्तुओ को देखने समझने लगा, उसके लिये मेला–मंडई मनोरंजन के साथ सीखने की जगह भी बन गई। अपने देवी पर आस्था व्यक्त करने के लिये अपनी परम्परा अनुरूप देव आराधना गीत गाकर, नृत्य कर, पारम्परिक वाद्य बजाकर सम्मान प्रकट करने लगा और मंडई वृहद स्वरूप धारण कर लिया।

नारायणपुर की मावली मंडई में नारायणपुर, अबूझमाड़ के अलावा अन्य क्षेत्रों से भी आदिवासी एकत्रित होते हैं और मंडई का आनन्द उठाते हैं। मुरिया और हल्बा दोनों जनजाति के लोग बस्तर में सभी जगह बसे हुये हैं और नारायणपुर में उनकी संख्या अधिक है, ऐसे में इनकी रिश्तेदारी अन्य क्षेत्र के लोगों के साथ हैं। यहाँ निवासरत जनजाति समाज अपने सबसे बड़े लोकोत्सव में सभी को आमंत्रित करता है। सभी लोग आते भी हैं, यही कारण है कि यह आदिवासियों का सबसे बड़ा मेला है। इस मेले में भाग लेने के लिये अन्तागढ़, कोयलीबेड़ा, परलकोट, परतापुर, भानुप्रतापुर, कांकेर केशकाल, धनोरा, बड़ेडोंगर, कोंडागाँव, माकड़ी, मरदापाल, जगदलपुर, दन्तेवाड़ा, सुकमा व बीजापुर आदि क्षेत्रों से मुरिया और हल्बा जनजाति के लोग आते हैं। दूसरी जाति और वर्ग के रिश्तेदार भी इस मेले के लिये आते है। लोगो के सग्रंहण के कारण इस मंडई को आदिवासियों की सबसे बड़ी मंडई का दर्जा प्राप्त है।

बस्तर के आदिवासियों की जीवन शैली अन्य समाज के लिये सदैव कौतुहल का विषय रहा है। सरलता और सादगी से जीवन–यापन करना इनकी विशेषता रही है। सुदूर वनाचंल में बुनियादी सुविधा के आभाव में जीवन जीने की कला अन्य समाज के लिये हमेशा जिज्ञासा का कारण रहा है, इसलिये वह आदिवासियों की जीवन पद्धति को जानने के लिये सदैव उत्सुक रहता है। बस्तर का आदिवासी समाज अपनी विशेष जीवन पद्धति और अद्भूत संस्कृति के लिये विश्व में जाना जाता है। इसका श्रेय पाश्चात्य लेखक डब्लू. व्ही. ग्रिगसन व वेरियर ऐल्विन को जाता है, जिन्होंने आजादी से पूर्व इनके जीवन को बहुत ही करीब से देखा, परखा और लिखा। इनके द्वारा अंग्रेजी भाषा में ग्रंथ लिखा गया था। अतः अंग्रेजी के विद्वान, शोधार्थीयों ने इसे पहले पढ़कर, आदिवासियों के विषय में भारत के लोगों से और बस्तर के लोगों से भी पहले जाना। जब ये शोधार्थी, विद्वान इन आदिवासियों के जीवन को नजदीक से जानने के लिये आये, तो इनके विषय में लिखा व प्रसारित किया, जिसका परिणाम यह हुआ कि इनके विषय में जानने की लोगों की उत्सुकता बढ़ी और लोग आदिवासियों के विषय में जानने के लिये अधिक आने लगे।

बस्तर सम्भाग में नारायणपुर क्षेत्र को आदिम संस्कृति के लिये जाना जाता है। मुरिया और माड़िया जनजाति का बाहुल्य होने के कारण, इनकी जीवन शैली अन्य समाज के लिये सदैव कौतुहल का विषय रहा है। "मुरिया एंड देयर घोटूल'' उनका घोटुल" के लेखक वेरियर ऐल्विन का यह कार्य क्षेत्र रहा है। सन् 1935 से 1942 तक

लगातार यहाँ आकर मुरिया जनजाति के विषय में अध्ययन करते रहे। इनकी पुस्तक ने विदेशी मूल के लोगों का ध्यान अपनी ओर आकर्षित किया। पाश्चात्य विद्वानों ने इनके विषय में अधिक जानने के उत्सुक हुये और यहाँ आने लगे। ऐसे लोगों के साथ भाषा की समस्या थी साथ ही किसी राह दिखाने वाले की, जिसका समाधान देश के विख्यात शोधार्थियों व लेखको ने पूरा किया। मुरिया और अबूझ माड़िया जनजाति के जीवन को करीब से जानने के लिए नारायणपुर मावली मंडई सबसे अच्छा अवसर है, जिसमें बहुतायत में आदिवासी समाज भाग लेते है। उनके जीवन के सभी पहलू यहाँ देखने मिलता है। यही कारण है कि इस मेले में देश–विदेश से लोग आने लगे और मेले ने अन्तर्राष्ट्रीय ख्याति प्राप्त की । नारायणपुर मावली मंडई के कारण इस क्षेत्र की प्रसिद्धी बढीं। नारायणपुर के विश्व प्रसिद्ध मावली मंडई में बस्तर के सम्पूर्ण क्षेत्र से आदिवासियो का आगमन होता है, सभी इस मंडई मे उत्सुकता के साथ पुरे आयोजन में अपनी सहभागिता करते हैं। इसलिए क्षेत्र के आदिवासियों को समझने का सर्वाधिक उपयुक्त स्थान मंडई होता है। इसी कड़ी में आदिवासियों के विषय में जानने इस मेले में पर्यटक और शोधार्थी आते हैं। जब आवागमन और संचार माध्यम की पर्याप्त सुविधा नहीं थी, उस समय आकाशवाणी और दूरदर्शन ने इस मंडई को प्रमुखता से प्रचारित प्रसारित किया। आदिवासियों के जीवन के सम्पूर्ण आयाम को मंडई के आयोजन के दिनों में समझना शोधार्थियों व अध्येताओं के लिए महत्त्वपूर्ण विषय–वस्तु है।

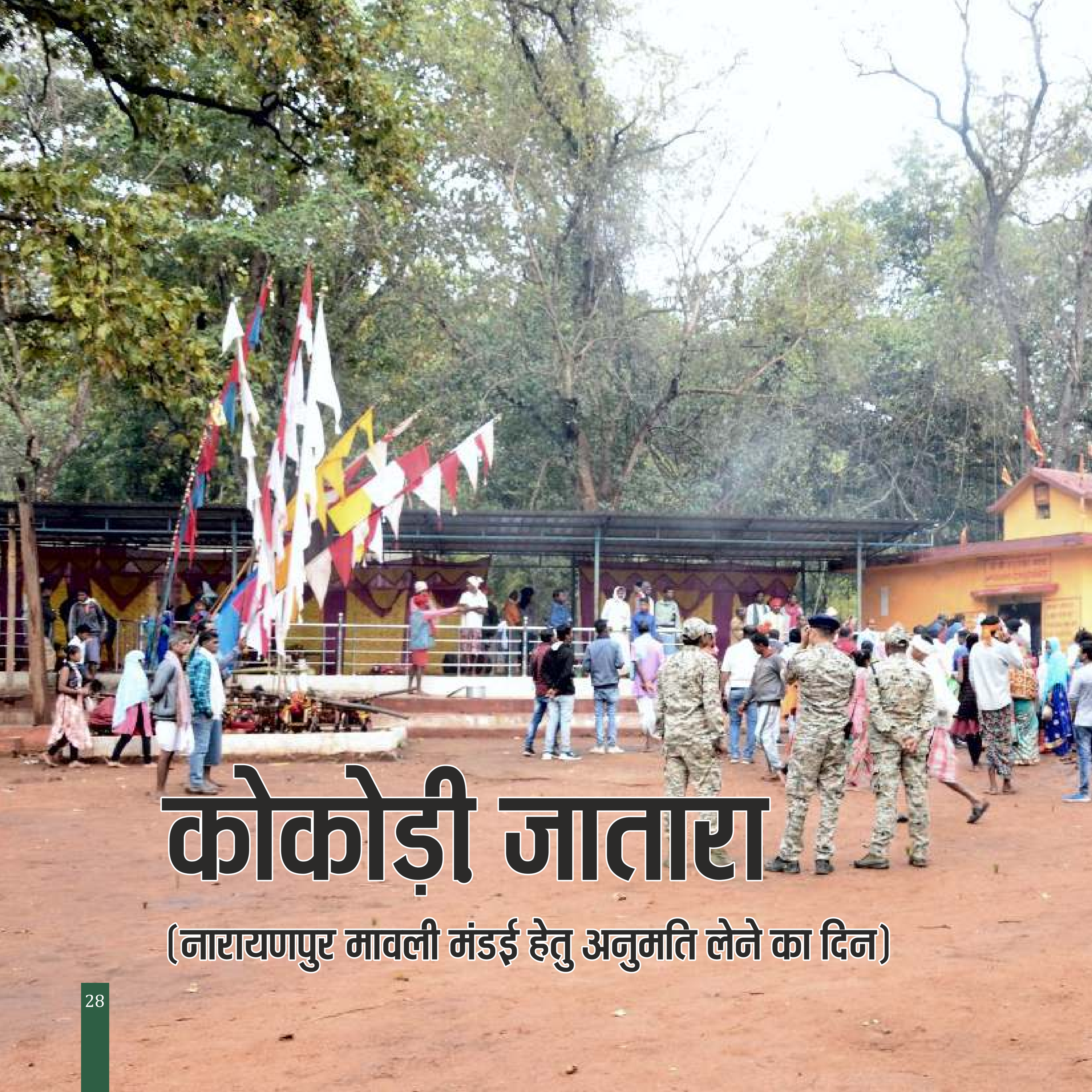

कोकोड़ी जातारा

(नारायणपुर मावली मंडई हेतु अनुमति लेने का दिन)

नारायणपुर की मावली मंडई प्रत्येक वर्ष माघ महाने में महा शिवरात्रि से पहले बुधवार को भरती है। महा शिवरात्रि यदि बुधवार को होती है, तब भी यह मंडई उससे पहले बुधवार को ही भरेगी। मंडई का दिन निश्चित होने से सभी को इसकी जानकारी हो जाती है। सब अपने तरीके से तैयारी करते हैं। मावली माता का क्षेत्र करगाल परगना के अन्तर्गत आता है और करगाल परगना के मंडादेव 'हाड़े हिड़मा' हैं। इनका ककसाड़ होने के बाद ही उसके परगने में मेला भरता है। यह कहा जाता है कि 'कोकोड़ी' में होने वाले इस जातरा में माता मावली मेला के लिये अनुमति मांगी जाती है। इसे 'कोकोड़ी करिन जातरा' या 'राजटेका का जातरा' भी कहा जाता है। कोंकोड़ी ग्राम में विराजित देवी जो 'हाड़े हिड़मा' की धर्म पत्नी हैं को गोंडी भाषी लोग 'राज टेका 'कहते हैं। 'राज टेका' का नाम 'देवी राजेश्वरी' है, यह 'माता मावली' की पुत्री है और 'हाड़े हिड़मा' बूढ़ादेव के 'छोटे भाई' हैं।

बहुत प्राचीन समय में तीन भाई 'बप्पे हिड़मा'(बूढ़ादेव), 'नूले हिड़मा'और 'हाड़े हिड़मा' तीन भाई माता मावली के शरण में आकर निवास किये। उसी काल में माता मावली के सात पुत्रियों में से एक राजेश्वरी से बूढ़ादेव के सहोदर छोटे भाई हाड़े हिड़मा का प्रेम हो गया। राजेश्वरी और हाड़े हिड़मा एक–दूसरे के प्रेम की बात जब दोनों बड़े भाईयों को मालूम हुई तो उन्होंने अपने छोटे भाई को समझाया कि ''हम माता मावली के आश्रय में रह रहे हैं, उनकी पुत्री के साथ इस तरह से प्रेम करना अनुचित है'' परन्तु प्रेम में डूबा छोटा भाई नही माना तब दोनों बड़े भाई उसका त्याग करके अलग–अलग दिशा में चले गये। 'बप्पे हिड़मा' 'दुगांनहुर पहाड़ी' की तराई में बसे ' खड़कागाँव' गये और 'बूढ़ादेव'के नाम से प्रसिद्ध हुये । 'बूढ़ा देव' 'दुगाल परगना' के 'मंडा देव' हैं इन्हें 'दुगाल परगना' का गोत्र देव भी माना जाता है। इनके द्वारा अपने सभी गोत्र के लोगों को एक–एक गाँव देकर 'दुगाल परगना' में बसाया। दूसरे भाई 'मटावंड' में अपना स्थान बनाया और बेनूर परगना के गोत्र देवता होकर अपने गोत्र के लोगों को एक–एक गाँव में स्थान दिया। 'हाड़े हिड़मा' मावली माता की पुत्री 'राजेश्वरी' से विवाह करके 'कोकोड़ी' (बाघडोंगरी) चले गये और करगाल परगना बनाया। देवी राजेश्वरी बहुत ही शक्तिशाली एवं प्रतापी देवी हुईं, इन्हें हल्बा, मुरिया व माड़िया जनजाति के लोग अपनी आराध्या देवी मानते है।

मावली मंडई की तिथि निश्चित है, इसलिये करगाल परगना में होने वाले 'ककसाड़' (जातरा) को इस तिथि के पूर्व आयोजित कर लिया जाता है। यह जातरा मावली मंडई से लगभग 15 दिन पूर्व कर लिया जाता है। जातरा में सभी गोत्र देवताओं की विशेष पूजा समाप्ति के बाद सभी ग्राम प्रमुख और देव प्रमुख की उपस्थिति में मावली मंडई करने की अनुमति ली जाती है और राज टेका से इस मंडई को निर्विघ्न सम्पन्न कराने की जवाबदेही दी जाती है। इस ककसाड़ के सम्पन्न होने के बाद नारायणपुर के देवताओं से सम्बन्धित लोग और देव समिति के लोग मावली गुड़ी (मंदिर) में जमा होकर माता की पूजा करने के पश्चात सभी देवताओं का आह्वान करते हैं। यह माता मावली की ओर से सभी देवताओं को मेले मे आने का निमंत्रण होता है,। नारायणपुर तीन परगनों का संगम स्थल है, इसे देव कोठार कहा जाता है। यह स्थान वर्तमान दक्षिणमुखी हनुमान मंदिर के सामने पीपल का पेड़ है। 'देव कोठार' के दक्षिण में करगाल परगना, यह पीपल वृक्ष के पीछे गढ़पारा कुम्हार पारा होते हुये अबुझमाड़ तक जाता है। उत्तर में दुगाल परगना, यह परगना नारायणपुर के जगदीश मंदिर से लेकर

रावघाट और दुगानहूर पर्वत श्रृंखला तक जाता है। इसी तरह बारा जाड़ियान परगना बंधुआ तालाब नारायणपुर से लेकर एड़का खड़कागाँव के आगे तक विस्तारित है। बारा जोड़ियान परगना के मुख्य देवता 'होचे मुत्ते' हैं। इस मेले के लिये सभी परगने के देवी–देवताओं का आह्वान किया जाता है। माता मावली नारायणपुर ही नहीं सम्पूर्ण बस्तर की आराध्य देवी है। माता का निमंत्रण मिलना सभी देवताओं के लिये गर्व का विषय है। सभी इस मेले में भाग लेकर गौरवान्वित होते हैं। इस मंडई में दुगाल परगना के देवी–देवता भी आमंत्रित होते हैं पर वे भाग नही लेते। कहा जाता है कि जिस स्थान पर करगाल परगना के गोत्र देवता उपस्थित होगें उस स्थान पर दुगाल परगना के देवी–देवता शामिल नहीं होगें और जहाँ दुगाल परगना के देव उपस्थित रहेगें उस स्थान पर करगाल परगना के देवी–देवता नहीं जायेगें। ऐसी स्थिति को टालने का प्रयास किया जाता है, कभी ऐसी स्थिति बन भी जाती है, जिसकी सम्भावना कम होती है, तब देवताओं के मानने वाले व्यक्तियों के मध्य 'अपटापाड़ी' (कुश्ती) होती है। दोनों परगना के जानकार लोग बताते हैं कि यह स्थिति एक घोड़े को लेकर उत्पन्न हुई। बताते हैं कि बुढ़ादेव के पास एक सुन्दर घोड़ा था, जिसकी वह सवारी किया करते थे। उन्हें वह घोड़ा अति प्रिय था, उस पर वे किसी को सवारी करने नहीं देते थे। एक दिन उनके छोटे भाई हाड़े हिड़मा अपने बड़े भाई से पारिवारिक भेंट करने आते हैं। वहाँ उनकी मुलाकात अपनी भाभी से होती है। बूढ़ादेव बाहर गये हुये थे। हाड़े हिड़मा देखते हैं कि पास में एक बहुत ही सुन्दर घोड़ा चर रहा है, वे अपनी भाभी से घोड़ा के विषय में पूछते हैं ।भाभी बताती है 'यह घोड़ा तुम्हारे भैया का है' ।हाड़े हिड़मा उस पर सवारी करने की इच्छा व्यक्त करते हैं। भाभी मना करती है कहती है "यह तुम्हारे भैया की प्रिय सवारी है, इस पर वे किसी को बैठने नहीं देते"। फिर भी हाड़े हिड़मा उस घोड़े पर सवारी करते हैं, उन्हें वह घोड़ा इतना पसन्द आता कि उसे लेकर वे अपने गाँव चले जाते है। इधर बूढ़ादेव अपने घर लौटते हैं, वहाँ वे अपने घोड़े को न पाकर उसके विषय में अपनी पत्नी से पूछते हैं, वह उन्हें सारी बात बताती है। बूढ़ादेव अपनी पत्नी के ऊपर बहुत नाराज होते हैं। भाई से अपना घोड़ा माँगते हैं तो वह घोड़ा वापस नहीं करता, इसी बात को लेकर दोनों भाईयों में विवाद है। यह बात इतनी बढ़ गई कि दोनों एक–दूसरे का मुँह भी नहीं देखते। यह दुश्मनी देव काम में भी दिखाई देती है।

सामुहिक जातरा
(मंडई की पूर्व संध्या)

देवताओं का आहवान करने के बाद बुधवार को मंडई के पूर्व दिवस मंगलवार के दिन देवताओं से सम्बन्धित लोग नारायणपुर के पटेल पारा स्थित गढ़िया गुड़ी (गढ़िया बाबा के मंदिर) में शाम को इकट्ठा होते हैं। यहाँ देव चढ़ाने और देव उतारने का काम होता है। इसका अर्थ होता है कि देवता अपने लिये नया सिरहा का चुनाव करता है। ऐसा होता है कि किसी देवता के सिरहा को किसी कारण देवता चढ़ना बन्द हो जाता है। इसके कई कारण हो सकते हैं, जैसे सिरहा की उम्र ज्यादा हो जाना, या सिरहा द्वारा ऐसा काम करना जो देवकाम में वर्जित हो या फिर सिरहा का कार्य देवता को पसन्द नहीं आया हो, तब सिरहा के ऊपर देवता कि सवारी आना बन्द हो जाता है। कभी सिरहा स्वयं देवता से प्रार्थना करता है कि अब इस कार्य से उसे मुक्त करें। यह नया सिरहा बनाने का कार्य प्रति वर्ष किया जाता है। इससे देवता और सिरहा की परीक्षा भी हो जाती है। यहाँ यह बताना आवश्यक है कि देवता के पुजारी या सेवादार का

चयन गाँव के लोगों के द्वारा किया जाता है, उसमें भी वह पुजारी उसके मानेय परिवार का होना आवश्यक है। मानेय परिवार से अर्थ है कि ऐसा परिवार जो देवता का उत्पति के समय से उनकी सेवा कर रहा होता है या देवता ने उसे यह अधिकार स्वयं दिया। देवता अपने सिरहा का चयन स्वयं करता है, वह भी ऐसे ही मानेय परिवार के किसी किशोर लड़के को देवता चढ़ाने उतारने की प्रक्रिया आधी रात तक जारी रहती है, इसमें देवताओं के मानेय परिवार से सभी लोग आते हैं। देवता का सिरहा मानेय परिवार के किसी दूसरे खानदान का भी हो सकता है, मगर यह बहुत ही कम होता है। जब उस परिवार में बुजुर्ग या महिलायें ही होती हैं, तब ही ऐसा सम्भव है। नया सिरहा की कई तरह से देवता से सम्बन्धित लोग कठिन परीक्षा लेते है, उसे सत्यता की कसौटी में परखा जाता है।

इसके बाद दिव्य काजल बनाया जाता है। यह गुप्त क्रिया है, इसे देवताओं से सम्बन्धित लोग ही जानते हैं और इसे गुप्त रखा जाता है। 'कार कुकड़ी' (काली मुर्गी) से बनाया जाता है। जिस चूजे का सारा शरीर काला हो, यहाँ तक की उसका खून भी काला होता है, उसे 'कार कुकड़ी' कहते हैं। इस काजल को बहुत ही पवित्र माना जाता है। मेला परिक्रमा के समय 'आड़ मावली'स्थल पर जानकार लोगों में इस काजल से टीका लगाने की होड़ सी मची रहती है, जिसे टीका लगाने का मौका मिलता है, वह अपने को सौभाग्यशाली समझता है।

मंडई लगने के पूर्व रात्रि अर्थात मंगलवार को देवताओं से सम्बन्धित लोगों के साथ ग्राम प्रमुख अर्ध रात्रि में आड़ मावली की पूजा करने जाते हैं। 'आड़ मावली', माता मावली के विशेष कार्य को स्मरण रखने यह नाम दिया गया है। मावली माता ने मुगल सैनिकों के रक्त–पात से नारायणपुर गढ़ की रक्षा की थी और सुखे में 'डोंगा' (नाव) चलाने का चमत्कार किया था और उस नाव को आज के राजीव चौक में रखा गया था, वह सेमल का वृक्ष में परिवर्तित हो गया था। इसी स्थान में 'आड़ मावली' की पूजा मंगलवार अर्धरात्रि को की जाती है। पूजा करने के बाद माता से प्रार्थना की जाती है हे माता आपके सम्मान में मंडई का आयोजन कर रहे हैं, सारी बाधाओं को आपको दूर करना है। यहाँ पूजा करने के बाद सभी लोग मंडई स्थल पर जाते हैं, यहाँ भी ग्रामीणों के द्वारा विराजित आड़ मावली की पूजा प्रार्थना की जाती है। ''हे माता आपके नाम से प्रति वर्ष मेले का आयोजन करते हैं, इसमें दूर–दूर से लोग आते हैं, सब कमाने खाने आते हैं, सबकी रक्षा करना माँ" यह पूजा माता के सहचर 'आंगा देव' सोन 'कुवँर बाबा' की देख–रेख में होता है।

नारायणपुर के माता मावली मंडई में 8–10 कि.मी. दूर तक के देवी देवता सम्मलित होते है। इस मेले में माता मावली के साथ मेले की परिक्रमा करना देवताओं का सौभाग्य होता है। यही कारण है कि सभी देवी–देवता जिनका विग्रह आंगा या डोली जो भी होता है, वे सभी और जिनका विग्रह नहीं होता वे भी अपने सिरहा के साथ या अपने परगने के देवता सम्बन्धित लोगों के साथ आते हैं। माता मावली के मंडई या देवी जातरा में सभी देवी–देवता चाहे वह किसी भी कुल के हो या किसी भी गोत्र के हो, सभी सम्मलित होते हैं। माता मावली सम्पूर्ण बस्तर की आराध्य देवी होने के साथ ही सभी कुल के लोग, सभी गोत्र के लोग, यहाँ तक कि सभी देवी–देवता उन्हें अपनी माता मानते हैं। माड़िया, मुरिया जनजाति मावली माता को अपनी देवी मानते है। हल्बा जनजाति और अन्य समाज के लोग माता

के सेवादार हैं, इसलिये माता को सभी जाति, वर्ग के लोग मानते है। माता मावली मंडई में सभी लोग अपने देवी–देवताओं के साथ पूरी निष्ठा से भाग लेते हैं।

पूर्व काल से ही दूर–दराज के लोग सुबह से ही अपने देवी या देवता के साथ भोजन बनाने का सामान साथ लेकर इस मेले में सम्मलित होने के लिये निकलते हैं और नारायणपुर के देव कोठार के पास स्थित भंगाराम बाबा के मंदिर में विश्राम कर भोजन आदि पकाकर खाते हैं तथा जब सभी देवतागण देव कोठार में जमा हो जाते हैं, तब वे भी उनके साथ सम्मलित हो जाते हैं। नजदीक गाँव के देवता से सम्बन्धित लोग अपने गाँव से खाना खाकर देवता को लेकर सीधे देव कोठार में आते हैं। देवी जातरा (मंडई) की तरह आगत देवी–देवताओं को पूर्व में आकर मावली गुड़ी (मंदिर) में जाने की आवश्यकता नहीं हैं, कारण कि इस मंडई में मान पाने के लिये नहीं, माता को पिछले कुछ वर्षों से नारायणपुर के बाहर गाँव के देवी–देवताओं का आगमन एक दिन पूर्व से होने लगा है। जिला नारायणपुर का आदिवासी समाज मेला स्थल से कुछ दूरी पर गढ़िया पहाड़ी की तराई में अपना सामाजिक भवन बनाया है, तबसे वह अपने देवी–देवताओं को एक दिन पहले मंगलवार को आमंत्रित करते हैं।

जिला गोण्डवाना सामाजिक भवन निर्माण के साथ ही इस जिले के सबसे बड़े आदिवासी समाज का सारी गतिविधियाँ यहीं से संचालित होती है। यह समाज के लोगों का और सामाजिक पदाधिकारियों की अच्छी सोच का परिणाम है। उनका अपने देवी–देवताओं के प्रति अगाध श्रद्धा है, जिससे वे अन्तर्राष्ट्रीय ख्याति के इस के मंडई आयोजन में आमंत्रित अपने देवी–देवताओं का सम्मान करते हैं। आदिवासी समाज का मानना है कि हमारे देवी–देवता माता के सम्मान में इस मेला में भाग लेते हैं। ऐसा बहुत ही कम अवसर आता है कि भिन्न–भिन्न कुल और गोत्र के देवता एक साथ एकत्रित होते हैं। आदिवासी समाज ने विचार किया कि इस अवसर का लाभ उठाने के लिये और अपने देवी–देवता का सम्मान करने के लिये एक वृहत आयोजन किया, जिसे वह 'सामूहिक जातरा' का नाम दिया। गोण्डवाना सामाजिक भवन में अब यह आयोजन बहुत ही विशाल रूप में मनाया जाने लगा।

आदिवासी समाज इस मंडई में आने वाले देवताओं को मंडई से एक दिन पूर्व मंगलवार को जिला गोण्डवाना भवन में आमंत्रित करते हैं। मेले में सम्मलित होने वाले सभी देवी–देवता अपने गाँव से मंगलवार दोपहर को निकलते हैं और लगभग इस स्थान में गोधूली बेला तक पहुँच जाते हैं। इनके स्वागत के लिये समाज के द्वारा पूर्व से ही सम्पूर्ण तैयारी की जाती है। सभी आगत देवताओं को ससम्मान विराजित किया जाता है। आगत देवों के सम्मुख दीप प्रज्वलित की जाती है क्रमशः सभी देवों की पूजा की जाती है। यह पूजा समाज की उपस्थिति में उस देव के पुजारी द्वारा की जाती है, इस अवसर पर समाज के किसी पदाधिकारी को आयोजन के विषय में कोई शंका होती है, तब देव पूछाया जाता है और देव के बताये अनुसार शंका का समाधान किया जाता है। पूजा समाप्ति के पश्चात सामूहिक भोज समाज के द्वारा दिया जाता है।

भोजन के बाद विभिन्न गाँवों से आये लोगों के द्वारा देव नंगाड़ा, मोहरी, तुड़बुड़ी आदि वाद्य बजाया जाता है। गाँवों से आये सिरहाओं पर देवता आरूढ़ होते है और सभी नंगाड़े के सामने अपने–अपने माई धुन में खेलने लगते हैं।

इसी समय लड़कों के द्वारा ढोल बजाया जाता है। ढोल एक जुझारू बाजा होता है, जिसके बजते ही लोगों में उत्साह का संचार होता है और पैर अपने आप थिरक उठते हैं। ढोल के बजने के साथ ही महिलायें एक–दूसरे के कमर में हाथ डाले नृत्य करने लगती है और गीत गाती हैं। इस नृत्य को 'ढोल एन्दना' और महिलाओं द्वारा गाये जाने वाले गीत को 'पेन पाटा' कहा जाता है। 'ढोल एन्दना' का अर्थ 'ढोल नाच' और 'पेन पाटा' का अर्थ 'देव गीत' होता है। यह गीत देव आह्वान गीत होता है। इस समय यहाँ विराजित देवताओं के विग्रह आंगा, डोली को भी खेलाया जाता है। ढोल नृत्य कर रही महिलाओं के मध्य देवता भी गलबहियाँ डाले नृत्य करने लगते है। इस आयोजन का यही मुख्य उद्देश्य भी होता है। आदिवासी समाज का मानना है कि उसके देवतागण जितनी उमंग, उत्साह से खेलेगें, वर्ष भर उतनी ही खुशियों की बरसात होगी। यह कार्यक्रम पूरी रात चलता है।

कोकरेंग नृत्य

(मंडई का मुख्य आकर्षण)

देवताओं की विदाई के साथ ही मेला भरना प्रारम्भ हो जाता है। बुधवार को मेला रात भर जारी रहता है क्योंकि बुधवार को देर रात तक होने वाले 'कोकरेंग नृत्य' के कारण मेला का क्रम पूरे दिन–रात चलता रहता है। 'कोकरेंग नृत्य' का तात्पर्य कोक अर्थात मूर्गा, रेंग अर्थात बांग देना अर्थात रात से सुबह मुर्गे के बांग देते तक जारी रहने के कारण इस नृत्य को 'कोकरेंग' नृत्य कहा गया। यह नृत्य आदिवासी नवयुवक–युवतियों के द्वारा किया जाता है। यह एक विशेष प्रकार का नृत्य है, जो बस्तर में केवल नारायणपुर क्षेत्र में ही किया जाता है। कोकरेंग नृत्य मुरिया और माड़िया दोनों जनजातियों के द्वारा किया जाता है। इस नृत्य का नाम 'कोकरेंग' है, क्योंकि यह 'देर रात प्रारम्भ होकर मुर्गा के बाँग देने तक' चलता है।

चाँदनी रात में इसका आयोजन किसी खुले मैदान में किया जाता है। कोकरेंग नृत्य के लिये आदिवासी युवक–युवतियाँ विशेष सिंगार करते हैं। दोनों के परिधान एकदम सफेद होते हैं। लड़के सफेद धोती को 'घाघरे' की तरह पहनते हैं शरीर में सफेद रंग का बनियान होता है और सिर पर सफेद पगड़ी पहनते हैं। इससे पहले अपने माथे पर वे छोटे–छोटे मोती से गूंथी माला को करीने से सजाने के बाद पगड़ी बाँधते हैं। माला का फूंदड़ा दोनों कान के पास निकल कर झूल रहा होता है। इसे गोंडी में "तला कासरा" कहते हैं। इस माला को गले में भी पहनते हैं। पगड़ी के बीच एक सुन्दर कलंगी खोची जाती है, जो एक जंगली पक्षी भृंगराज के 'जलींग' (पंख) का गुच्छा होता है, जिसकी संख्या 20 तक होती है। इसे गोंडी में ''पिड़िया" कहते हैं। लड़कों के कमर में 15से 20 किलो की घन्टियाँ बँधी होती हैं, ये घन्टियाँ एक चमड़े के पट्टे में गुंथी होती हैं। दो प्रकार की घन्टी होती हैं, छोटी घन्टी को गोंडी में "मुयांग'' तथा बड़ी घन्टी को "हिरनांग" कहते हैं। कन्धे पर एक टंगिया या डन्डा होता है।

इसके गीत को लेहना पाटा' कहा जाता है। यह नृत्य देर रात प्रारम्भ होकर मुर्गा के बाँग देने तक जारी रहता है। यह नृत्य मावली मंडई की प्रमुख आकर्षण है। अन्य जगहों पर आयोजित होन वाले मंडई में यह नृत्य देव बिहरने परिक्रमा के पूर्व रात्रि मे होता है परन्तु नारायणपुर मंडई मावली माता के सम्मान में आयोजित किया जाता है इसलिये यहाँ यह नृत्य देव बिहरने परिक्रमा के बाद रात्रि में किया जाता है।

मुख्य मंडई

दूसरे दिन सुबह मंडई का दिन होता है, इस दिन गोण्डवाना समाज भवन में आदिवासी समाज द्वारा अपने देवताओं से सम्बन्धित लोगों के सम्मान में दोपहर का भोज का आयोजन होता हैं तत्पश्चात् वहाँ से समस्त देवी–देंवताओं को ससम्मान विदा किया जाता है। गोण्डवाना समाज द्वारा आयोजित इस सामूहिक जातरा में भी दुगाल परगना के देवी–देवता शामिल नहीं होते, कारण कि यहाँ भी करगाल परगना के देव उपस्थित रहते हैं। यहाँ से विदा होकर सभी देवतागण नारायणपुर महावीर चौक पर स्थित भंगाराम के मंदिर में जमा होते हैं। यहाँ देवतागण एक जुलूस के रूप में तोड़ी बजाते हुये पहुँचते हैं और विश्राम करते हैं।

नारायणपुर महावीर चौक स्थित देव कोठार में देवताओं और लोगों के आने का सिलसिला एक बजे दोपहर से प्रारम्भ हो जाता है। नंगारची और मोहरिया आकर अपना वाद्य बजाने लगते हैं और एक–एक करके सिरहाओं को 'देवता चढने' लगता है और वे सब देव कोठार में अपने–अपने 'पाड़' में खेलने लगते हैं। इस समय वहाँ पवित्र वातावरण होता है। देवतागण खेलते हैं, अपनी शक्ति का या सत्यता का प्रमाण देने के लिये अपने शरीर में लोहे के काँटेदार संकल से पीठ पर मारते हैं। देवताओं के कार्यों को श्रद्धालु मंत्रमुग्ध होकर देखते हैं।

बलि प्रथा एवं रस्म

माता मावली के मंदिर में गुप्त रूप से मेले के निर्विघ्न सम्पन्न होने के लिये काले बकरे की बलि दी जाती है।

एक बार फिर सभी उपस्थित लोगों में उत्साह का संचार होता है जब आंगा देव 'सोनकुंवर' बाबा का आगमन होता है। चार जवान लोगों के द्वारा बाबा के विग्रह आंगा को कांधे में उठाये होते हैं और बाबा नंगारची के सामने आकर खेलने लगते हैं। इस समय उपस्थित लोग अपने देवताओं का लाली, सिन्दूर से तिलक करते हैं, माली लोग देवताओं के लिये लाये फूलमाला उन्हें पहनाते हैं, देवतागण एक–दूसरे देवों से भेंट करते है। इसी समय शीतला माता के मंदिर से माता के दरश को थाली में सजाकर माता पुजारी सीधे मावली माता के मंदिर में ले जाते हैं। इसके बाद सोनकुँवर बाबा गढ़िया बाबा के मंदिर में जाते हैं। यहाँ सब गढ़िया बाबा के अन्तर्गत आने वाले देवताओं के सिरहाओं को सिर चढ़ता है सभी बाबा 'सोनकुंवर' की अगवानी में देव कोठार में आते हैं। इसी तरह शीतला माता के और मावली माता के अन्तर्गत आने वाले देवताओं के सिरहाओं के ऊपर भी देव चढता है। यहाँ इस समय तक गाँवों से आये देवताओं को भी देव चढ़ता है और वे भी नंगाड़ा के सामने अपनी शक्ति और सत्यता का प्रदर्शन करते हैं, सभी देवों से भेट करते हैं। सभी देवतागण के मानने वाले देवों को लाली, सिन्दूर से तिलक करते हैं, फूलमाला पहनाते हैं। नंगाड़ा, मोहरी, तुडबुड़ी बजते रहता है, देवतागण अपनी धुन पर मग्न होकर खेलते हैं, बहुत ही पवित्र वातावरण होता है, लगता है कि सारे देवता पृथ्वी पर आकर खेल रहे हैं और यहाँ उपस्थित जन समूह देवताओं पर फूल बरसा रहा है।

मंडई में देव बिहरनी
(देवी परिक्रमा)

देव कोठार में देवताओं की देव क्रीडा होने के दौरान सबसे अन्त में 'सांकर देव' आते हैं। सांकर देव के आने के साथ ही 'मंडई बिहरने' (परिक्रमा) के लिये देवतागण प्रस्थान करते हैं। परिक्रमा में जाने का भी एक क्रम होता है। सबसे पहले राऊत समाज के लोग चलते हैं, वे सब खुले बदन होते हैं और अपने शरीर में सफेद, काले रंग से विचित्र स्वांग बनाये होते हैं। राऊत लोग दोहा गाते, सिटी बजाते, नाचते हुये आगे चलते हैं। इसका कारण बताया गया कि बस्तर के देवतागण कुत्तों से परहेज करते हैं, इसलिये विचित्र स्वांग बनाये राऊत समाज आगे–आगे चलता है। इसके बाद देव नंगाड़ा बाजा बजाने वाले चलते हैं और देवताओं में सबसे पहले गढ़िया बाबा और सांकर देव साथ में चलते हैं।

परिक्रमा के लिये देवताओं का जुलूस 'देव कोठार' से बुधवारी बाजार रोड से राजीव चौक पहुँचता है और यहाँ से मंडई के लिये जाती है। मंडई में देवताओं का प्रवेश कोटगुड़ीन माता के मंदिर के सामने से होता है। मेले में पहुँच कर देवतागण का जुलूस माता कोटगुड़ीन की प्रतीक्षा करता है माता कोटगुड़ीन को लेने सोनकुँवर बाबा, गढ़िया बाबा, सांकर देव जाते हैं और माता के अपने विग्रह और ध्वज के शामिल होने पर परिक्रमा प्रारम्भ होती है। यहाँ यह जानना आवश्यक है कि जुलूस में केवल मावली माता का लाल ध्वज, शीतला माता का श्वेत ध्वज तथा कोटगुड़ीन माता का लाल ध्वज ही शामिल होता है, देवताओं के ध्वज उनके यश, कीर्ति के प्रतीक होते हैं। सभी देवताओं के अपने ध्वज होते हैं परन्तु इस मंडई में यहाँ की सर्वमान्य देवी माता मावली के सम्मान में देवता आते हैं, इसलिये वे अपने ध्वज के साथ नहीं आते। केवल देवताओं का विग्रह और सिरहाओं के ऊपर आरूढ़ देव ही शामिल होते हैं और बस्तर की आराध्य देवी माता मावली को सम्मान देते है।

देवतागण की परिक्रमा एक निश्चित मार्ग से ही प्रतिवर्ष होती है। इस मार्ग पर कोटवार, पटेल और सुरक्षा कर्मी पहले से मार्ग बनाते चलते हैं। देवतागण पूरे उत्साह और उमंग से चलकर दो परिक्रमा पूरी करते हैं। तीसरी परिक्रमा मेला स्थल पर स्थापित आड़ मावली के स्थान तक देवतागण जाते हैं। यहाँ आड़ मावली के स्थान पर मावली माता के विग्रह को रखा जाता है। सभी लोग अपने साथ लाये चावल और धान लाई को माता के ऊपर छिड़क कर न्योछावर करते हैं। देवतागण गढ़िया मंदिर में मंगलवार की रात को गुप्त तरीके से बनाये काजल को अपने माथे पर तिलक करते हैं। इसे पाने के लिये देवताओं में होड़ सी मचती है। इसके पश्चात परिक्रमा पूरी न कर सभी वापस लौटते हैं। कोटगुड़ीन माता को उनके मंदिर में ले जा कर विदाई दी जाती है। देवताओं का जुलूस मावली माता मंदिर में वापस आता है। आने वाले मार्ग में थोड़ा परिवर्तन किया जाता है,। जुलस अब राजीव चौक से पहले देवांगन पारा मार्ग से बुधवारी बाजार रोड से माता मावली मंदिर पहुँचता है। यहाँ सब देवताओं को नारियल देकर सम्मान किया जाता है और विदाई दी जाती है। देवताओं की परिक्रमा के बाद मेला का विधिवत शुभारम्भ होता है।

आयोजन प्रक्रिया :

बस्तर में भरने वाले समस्त मेला–मंडई का आयोजन स्वस्फूर्त होता है। जहाँ केवल तिथि का निर्धारण कर उसका प्रचार किया जाता है। लोगों को तिथि की सूचना कई माध्यम से दी जाती है। तिथि तय होने व सूचना प्रसारित होने के साथ ही धार्मिक रूप से जुड़े सभी लोग

अपने–अपने कर्तव्यों का पालन कर मावली मंडई के आयोजन को वृहद रूप प्रदान करते हैं। यह मेला बहुत ही प्राचीन समय से भर रहा है, तब इसका स्वरूप भी समय के साथ बदलता रहा है। पहले जब ग्राम व्यवस्था नहीं थी, तब गाँव के लोग बैठक कर तिथि का निर्धारण कर स्वयं ही अपने गाँव, मोहल्ला, पारा में बता दिया करते थे। मंडई में सब गाँवों के देवताओं का आगमन होता है, इसलिये सभी गाँवों में समय से पूर्व सूचना पहुँच जाती थी और लोग उसी के अनुसार तैयारी करते थे। राजा अन्नमदेव के आने के बाद से ही ग्राम व्यवस्था लागु हुई। ग्राम व्यवस्था, ग्राम प्रमुखों की ही जवाबदारी थी। मंडई तिथि की सूचना ग्राम प्रमुख अपने प्रचलित पारम्परिक तरीके से ही देते थे, जिसमें 'तोड़ी फूँक' कर या 'ढोल पीट' कर मुनादी करके सूचना दी जाती थी।

उस काल में मंडई का कोई स्वरूप भी नहीं था, व्यापार जैसा कुछ नहीं होगा, केवल लोग अपने माता के जातरा में शामिल होने के लिये आते थे। मेला परिक्रमा का भी एक निर्धारित पथ होता है। दर्शनार्थी उस पथ के चारो ओर बैठकर या खड़े होकर माता जी के उपर फूल, लाई वगैरह न्योछावर करते थे। मावली माता की जातरा के समाप्ति के बाद वे अपने सगा–सम्बन्धियों से मिलकर सुख–दुःख बाँटते थे। वस्तु विनिमय के दौर में लगभग यही स्थिति थी। लोग अपने साथ उपज या अन्य सामान लाते थे और अपनी आवश्यकता के सामानों से बदले कर अपने साथ ले जाते थे।

जब वस्तु विनमय होता था, उस समय अपनी वस्तयें हाट–बाजार, मेला–मंडई में बदलते थे। इस तरह व्यापारियों की संख्या बढ़ती गई और मंडई में देव परिक्रमा पथ के चारों ओर में ये अपने सामानों को बदलने के लिये बैठते थे, यहीं से मंडई अपने स्वरूप में आने लगा होगा।

लोगों की आवश्यकताएँ बढ़ने के साथ ही वनोपज का संग्रहण होने लगा, इससे वस्तु विनिमय द्वारा आवश्यक वस्तुओं को बदलने का एक मानक भी बनाया गया। इस काल में हाट–बाजार और मेला–मंडई लोगों के लिये अनिवार्य होता था, कारण कि लोग अपनी जरूरतों के वस्तु बदलने के साथ–साथ रिश्तेदारों मिलने आने लगे। मंडई, देवी जातरा होने से इनकी आस्था से जुड़ी थी, दूसरे लोग व्यापार के उद्देश्य से आते और आदिवासी समाज अपनी जरूरतों के साथ आस्था प्रकट करने आते। इस प्रकार मेले का विस्तार होने लगा। बस्तर के गाँवों में ग्राम प्रमुख को पटेल कहा जाता था। मेला के आयोजन के लिये पटेल और देवी के पुजारी की भूमिका रहती थी। दोनों व्यक्ति अपने साथियों के साथ मेले की व्यवस्था करते थे। माझी, चालकी, गढ़पति आदि की देखरेख में ये सब आयोजन होने लगे। राजा दलपत देव के शासन काल में बस्तर के लोक देवी–देताओं को ज्यादा महत्त्व दिया गया और उस काल में इनकी सेवा के लिये लोग नियुक्त किये गये। सेवा करने के लिये अपने विश्वस्त हल्बा समाज के लोगों को रखा गया।

उस समय मावली मंदिर का निर्माण महावीर चौक गढ़ पारा में हो चुका था और मावली मंडई नारायणपुर, साप्ताहिक बाजार भी आज के बुधवारी बाजार में लगने लगा था। इस समय तक भी केवल देवी परिक्रमा स्थल तक ही मेला होता था। बस्तर का शासन ब्रिटिश सरकार ने अपने हाथ में ले लिया था, इसके शासन काल को स्टेट शासन कहा जाता था।

भौगोलिक परिस्थितियों को देखते हुये अन्तागढ़ से तहसील मुख्यालय नारायणपुर सन् 1934 में लाया गया। इस समय अनेक शासकीय कार्यालय भवन, विश्राम गृह, निवास गृह आदि बनने लगा था। इसी समय में नारायणपुर के बँधुआ तालाब का निर्माण कराया गया। सभी महसूस कर रहे थे कि मेला स्थल छोटा हो रहा है और इतने लोगों के लिये निस्तार की सुविधा भी नहीं है। इन सब बातों को विचार करते हुये मेला स्थल को बँधुआ तालाब के पास बखरूपारा में वर्तमान स्थल पर लाया गया। तब से नारायणपुर की विश्व प्रसिद्ध, ऐतिहासिक मावली मंडई इसी स्थान पर आयोजित की जाने लगी। तत्कालीन प्रशासनिक अधिकारी द्वारा स्थल की साफ–सफाई, एवं व्यवस्था का भार ग्राम पटेल, कोटवार और पटवारी आदि को दिया गया।

वर्तमान स्थान पर मेला के साथ साप्ताहिक बाजार को भी लाया गया। ग्राम वासियों ने विचार किया कि इस बात का याद बनाये रखने के लिये कि यहाँ मेला और साप्ताहिक बाजार लगता था, इस स्थल पर छोटा बाजार लगाने लगा, जिसे हटरी कहा जाता है। यह हटरी बुधवार को लगती थी, पहले मेला और साप्ताहिक बाजार बुधवार को लगने के कारण आज भी बुधवार को ही मेला लगता है। मंडई का सारा कार्य तहसील कार्यालय से होता था। देवता सम्बन्धित सामग्री गाँव के लोग चन्दा से करते थे।

सन् 1956 में दन्तेवाड़ा, भोपालपटनम और नारायणपुर को विशेष बहु उद्देशीय विकास खण्ड बनाया गया। शासकीय कार्यो में जनता की भागीदारी बढ़ने लगी थी, दूर–दूर से व्यापारी भी आने लगे थे। मंडई का स्वरूप

भी विस्तार पा रहा था, मंडई स्थल पर जनपद पंचायत जनरेटर से बिजली जलाकर प्रकाश किया जाता था और प्रोजेक्टर से फिल्म दिखाया जाता था, जो लोगों के लिये आकर्षण का केन्द्र होता था। लोग शाम तक मंडई में मनोरंजन किया करते थे और शाम को भोजन उपरान्त फिल्म देखते थे। इस समय मेले में कपड़ा, बर्तन, लोहे के औजार, सोना–चाँदी, श्रृगांर के सामान के साथ महाराष्ट्र के लोग 'कमरा' (कम्बल) बेचने लाते थे। खाने–पीने के लिये होटल, मनोरंजन के लिये लकड़ी के बड़े–बड़े झूले और चमत्कारों से भरी झाकियाँ आती थी।

सन् 1958 से ग्राम पंचायत का गठन होने के बाद सरपंच, पंच मनोनीत किये जाने लगे, इस समय सरपंच ग्राम प्रमुख के रूप में प्रशासन को सहयोग करते थे। सन् 1976 में नारायणपुर परियोजना का गठन नारायणपुर, ओरछा, कोयलीबेड़ा और अन्तागढ़ विकास खण्डों को मिलाकर किया गया। नारायणपुर में अनुविभागीय दण्डाधिकारी की पदस्थापना हुई, सारा प्रशासनिक अधिकार इनके हाथ में आ गया। इस समय मेला काफी ख्याति अर्जित कर चुका था। यहाँ नव प्रशिक्षु आई.ए.एस, अधिकारियों की पदस्थापना होती थी। उन्होनें आदिवासी संस्कृति के संरक्षण और संवर्धन के लिये कार्य करना प्रारम्भ किया। इस समय तक लोग इस मेले में आने के लिये लालायित रहते थे, इस समय तक मेला का स्वरूप काफी बदल गया था सारी व्यवस्था ग्राम पंचायत के माध्यम से कराने की व्यवस्था अनुविभागीय अधिकारी करते थे। प्रशासन द्वारा दुकानदारों से मेला का स्थल कर लिया जाने लगा और उसके बदले मेला स्थल पर बहुत सारी सुविधायें दी जाने लगी।

सन् 1979 से सरपंच का विधिवत चुनाव होने लगा, इस समय पंचायत की आय बढ़ाने के लिये साप्ताहिक बाजार और मेले में व्यापारियो से कर वसूला जाने लगा था। मेले की व्यवस्था पूर्ण रूप से प्रशासन ने अपने हाथ में ले ली। देव समिति द्वारा मेले की तिथि की घोषणा के साथ ही नागरिकों और प्रशासनिक अधिकारियों का एक बैठक बुला कर मेला संचालन समिति का गठन कर उसके माध्यम से मेले का संचालन किया जाने लगा। मेले में होने वाले खर्च के लिये परियोजना से राशि आबंटित की जाती थी। इस राशि से मेले में विधुत व्यवस्था और पेयजल उपलब्ध कराया जाता था। सभी शासकीय विभागों की प्रदर्शनी लगाया जाने लगा, इसे विकास प्रदर्शनी का नाम दिया गया। प्रदर्शनी में शासकीय योजनाओं आदि का प्रचार–प्रसार किया जाता था। यहाँ बुधवार की रात को विभिन्न गाँवों से आये नर्तक दल आदिवासी नृत्य का प्रदर्शन करते थे। यह मेले का आकर्षण होता था। इसके बाद यही दल पुराना पेट्रोल पम्प के सामने खुले मैदान में कोकरेंग नृत्य करते थे। बुधवार का दिन के साथ रात भी मनोरंजन से भरपूर होता है। रात में भानपुरी क्षेत्र से आये ओड़िया नाट मण्डली 'ओड़िया नाट' प्रस्तुत करते हैं और जगह–जगह छत्तीसगढ़ी नाचा होता है। कोकरेंग नाच, ओडिया नाट, और छत्तीसगढ़ी नाचा देखने लोग रात भर जागते हैं।

मेले में व्यापार भी अपने तरह से होता है। सोमवार और मंगलवार को कपड़े के व्यापार करते हैं। इसका कारण है कि दूर–दराज से आने वाले आदिवासी इन दो दिनों में पहनने के कपड़े खरीदते हैं। आदिवासी समाज के लिये मेला उत्सव होता है और अपने तिहार में नया कपड़ा पहना जाता है। आदिवासी समाज ही नहीं बस्तर के दूसरे समाज

के लोग भी नया कपड़ा पहनकर ही मेला घूमते हैं। बुधवार को अपेक्षाकृत व्यापार कम होता है, इस दिन देवताओं को समर्पित होता है और केवल खाना–पीना और रात भर मनोरंजन किया जाता है। गुरूवार और शुक्रवार को श्रृगांर, घरेलू उपयोग के सामानों की बिक्री होती है। शनिवार और रविवार को कृषि औजार, देवताओं से सम्बन्धित सामान, विवाह के लिये कपड़े आदि की बिक्री होती है। शादी के बर्तन और सामाजिक बर्तन सोमवार मंगलवार तक भी बिकते रहते है। इधर कुछ वर्षों से मेले में मीना बाजार आने से मेले की रौनक और बढ़ गई। मेला केवल बुधवार को ही रात भर होता था परन्तु मीना बाजार के कारण बुधवार से रविवार तक मेला रात भर चलता है। दुकानदार भी देर रात तक अपनी दुकाने खुली रखते है। होटल का व्यवसाय अच्छा होता है।

'मेला संचालन समिति' –

सन् 2003 में नारायणपुर नगर पंचायत का गठन हुआ। मेला संचालन के लिये नागरिकों की समिति बनती थी, साथ में नगर पंचायत के निर्वाचित पार्षदों की अलग से समिति बनाये जाने लगी। इस समय सारी व्यवस्था नगर पंचायत के माध्यम से होने लगी। निस्तार की सुविधा का प्रबन्ध किया जाने लगा, पीने के पानी की जगह–जगह व्यवस्था होने लगी। मेला स्थल की साफ–सफाई और लाइनिंग किया जाने लगा और व्यापारियों को उनके क्रम के अनुसार स्थान आबंटित किया जाने लगा। पुलिस प्रशासन सुरक्षा के लिये पर्याप्त सुरक्षा बल तैनात करने लगा। सन 2007 में नारायणपुर जिला का गठन हुआ और मेला संचालन जिला प्रशासन स्तर पर होने लगा। मेले का स्वरूप और व्यय किये जाने वाली राशि में पारदर्शिता के लिये नागरिकों और अधिकारियों की एक मेला संचालन समिति गठित की जाती है। यह संचालन समिति मेला के प्रारम्भ से समाप्ति तक के सभी कार्यो की निगरानी करती है। यह समिति पूजा–पाठ के लिये देव समिति को राशि प्रदान करती है, जिससे वे पूर्व में पूजा सामग्री का प्रबन्ध कर लेवें।

नारायणपुर माता मावली मेला विश्व प्रसिद्ध और ऐतिहासिक होने के कारण इस मेले में काफी संख्या में लोग और पर्यटक आते हैं, इसलिये जिला प्रशासन सुव्यवस्थित प्रबन्ध करने के लिये सजग रहता है। इसके अलावा नागरिक अधिकारियों का एक स्वयंसेवक दल का गठन किया जाता है, जो मेले में शान्ति व्यवस्था बनाने का काम करता है।

शासकीय योजनाओं के प्रचार–प्रसार के लिये सभी विभागों को प्रदर्शनी लगाई जाती है, जिसका विधिवत उद्घाटन देव परिक्रमा के बाद मुख्य अतिथि करते हैं। प्रदर्शनी स्थल पर बने मंच पर प्रति दिन विभिन्न सांस्कृतिक कार्यक्रम आयोजित किये जाते हैं। बुधवार रात्रि में 7 बजे रात्रि से 10 बजे रात्रि तक आदिवासी लोक नृत्य का आयोजन होता है, जो अतिथियों के लिये आकर्षण का केन्द्र होता है। अन्य दिन भी नगरवासियों के लिये इसी समय में सांस्कृतिक कार्यक्रम आयोजित किये जाते हैं। मेले में सुविधा उपलब्ध कराने के लिये समिति बनाई जाती है, जो साफ–सफाई, स्वास्थ्य सुविधा, पेयजल, प्रकाश व्यवस्था, मेलार्थियों को उपलब्ध कराती है। मेले में सुरक्षा के पर्याप्त इन्तजाम किये जाते है। सुरक्षा बलों द्वारा निगरानी होती है। आग से बचाव के लिये फायर ब्रिगेड तैनात किये जाते हैं।

पर्यटकों के ठहरने की व्यवस्था सुनिश्चित की जाती है। वर्तमान में मेले के सुचारू रूप से सम्पन्न किये जाने की सम्पूर्ण व्यवस्था जिला प्रशासन एवं जन सहयोग द्वारा किया जाता है।

'वर्तमान मेला संचालन समिति' -

नारायणपुर मावली मंडई वर्तमान मेला संचालन समिति का विवरण निम्नानुसार है।

'देव समिति' -

देव समिति के पदाधिकारी एवं सदस्यों की सूची निम्नानुसार है :–

पदाधिकारी -

1	अध्यक्ष	– श्री हिरा सिंह देहारी
2	उपाध्यक्ष	– श्री पुरषोत्तम पटेल
3	सचिव	– श्री बृजमोहन देवांगन
4	कोषाध्यक्ष	– श्री पूरन कुपाल

सदस्यों की सूची -

डुमतराई

1 श्री हिरा सिंह देहारी
2 श्री श्याम गिरी कुपाल
3 सज्जन सिंह गागड़ा
4 महेश्वर पात्र
5 श्री कुन्हेर सिंह कुपाल
6 श्री नरेन्द्र कुमार पात्र
7 श्री गौरीशंकर भोयर

चिहरीपारा

8 श्री मानसिंह बघेल
9 श्री भावसिंह देहारी
10 श्री लक्ष्मण पात्र
11 श्री लाखेन्द्र पुजारी
12 श्री बलराम पात्र

खड़ीबहार

13 श्री पूर्णानन्द कोलियारा
14 श्री जयसिंह मांझी
15 श्री धर्मराज नेताम
16 श्री राम उर्वशा

साकड़ीबेड़ा

17 श्री सेवकराम पुजारी
18 श्री सालिक राम
19 चौतन सिंह भण्डारी
20 श्री गाण्डा राम ध्रुव
21 श्री रोहित ध्रुव

लाटापारा

22 श्री जोशीराम पात्र
23 श्री डमरूराम पुजारी
24 श्री भुजबल प्रधान

कुम्हारपारा

25 श्री माहगू राम पाड
26 श्री शंकर पांडे
27 श्री भरत बघेल
28 बुधसिंह पुजारी
29 श्री रोशन पुजारी
30 श्री राजेन्द्र नायक
31 श्री धीरपाल कुपाल
32 श्री श्यामचन्द कुपाल
33 श्री अमर सिंह नाग
34 श्री श्याम कश्यप
35 श्रीमती बुधनबाई
36 श्रीमती प्रमीला प्रधान
37 श्री पूरन कुपाल

देवांगनपारा

38 श्री भगत प्रसाद देवांगन
39 श्री बलराम देवागंन
40 श्री बृजमोहन देवांगन
41 श्री श्यामसुन्दर देवांगन
42 श्री विश्वनाथ देवांगन
43 श्री अखिलेश्वर देवांगन
44 श्री प्रभुनाथ देवांगन
45 श्री अर्जुन देवांगन
46 श्री उत्तचंद जैन
47 श्री भगवती देवांगन

पटेलपारा

48 श्री गणेश राम पटेल
49 श्री खतूलाल पटेल
50 श्री चमरूराम पटेल
51 श्री पुरषोत्तम पटेल
52 श्री उमाशंकर पटेल
53 श्री सुरेश पटेल

खिचड़ीपारा

54 श्री राजेन्द्र सिंह राठौर
55 श्री सेवक राम निषाद
56 श्री विनोद निषाद
57 श्री खतु सिंह ठाकुर
58 श्री घुड़सिंह बघेल
59 श्री जानकी दास
60 श्री शिवकुमार पाण्डे
61 श्री गौतम गोलछा
62 श्री बलदाउ सेन
63 श्री प्रकाश सेन
64 श्री संतदास वैष्णव
65 श्री गंगूदास वैष्णवग

गढ़पारा

66 श्री केदार राउड
67 श्री घनश्याम पात्र
68 श्री रामकुमार पुजारी
69 श्री बहाल मांझी
70 श्री ईतवारी राम
71 श्री सोमनाथ
72 श्रीमती वेदबती पात्र
73 श्रीमती मीना नाग

बगलापारा

74 श्री लक्ष्मीनाथ पोटाई
75 श्री आनंदराम नेताम
76 कुमारी सोनिका पोरते

मंडई बजार (मेला)

मंडई मेला में आने वाले सभी लोगो के लिए 'मंडई बजार' आकर्षण का केन्द्र होता है। जहाँ तरह-तरह के रंग-बिरंगे वस्तुओं की दुकाने लगी होती है। रंग-बिरंगे खिलौने, तरह-तरह के पकवान, कृषि के औजार, बर्तन, कपड़े, खाने-पीने की वस्तुएं व मनीहारी सामान, फैंसी वस्तुएं आदि-आदि।

ग्रामीण मेले में खरीददारी करने के लिए वर्ष भर जमकर पैसों की व्यवस्था कर रखते हैं और नारायणपुर मावली मंडई में अपनी जरूरत व मनोरंजन की वस्तुओं को क्रय करते हैं।

मीना बाजार

तरह–तरह की खाने–पीने, दैनिक जरूरत की दुकानों के स्टाल के बाद होटल आदि से लगा हुआ बजार के एक किनारे में बड़े वृत में झूलों व फैंसी सामानों से भरा 'मीना बाजार' आकर्षण का केन्द्र होता है। बाजार में आए ग्रामीण नए तरीके से 'मीनाबाजार' में भी अपना व अपने बच्चों का मनोरंजन करते हैं।

उपसंहार

नारायणपुर क्षेत्र न सिर्फ छत्तीसगढ़ में अपितु पुरे विश्व में रंग–बिरंगे जनजातीय संस्कृति के लिए प्रसिद्ध है। नारायणपुर मावली मंडई के अध्ययन के लिए देश–विदेश के शोधकर्ताओं व पर्यटकों के लिए एक खुला संग्रहालय की तरह है। ऐसे में आदिमजाति अनुसंधान एवं प्रशिक्षण संस्थान द्वारा किया जा रहा ''नारायणपुर मावली मंडई का मोनोग्राफ अध्ययन'' का महत्व और भी अधिक हो जाता है। नारायणपुर क्षेत्र के विशिष्ट आदिम संस्कृति व रहस्यमय आध्यात्मिक पंरपराओं को लोगों तक लाने, अध्येताओं हेतु सम्बंधित जानकारी उपलब्ध कराने और इस महान परम्पराओं के संरक्षित व सुरक्षित करने हेतु यह एक महत्वपूर्ण अध्ययन है। जहां दिन प्रतिदिन नए–नए वस्तुएं आते जा रहे हैं वैसे–वैसे नारायणपुर मावली मंडई के सभी आयोजन के तरीके व उपयोग में आने वाली सामग्रियों में निरंतर बदलाव दृष्टव्य है। ऐसे में नारायणपुर मावली मंडई के रूप में जीवित इस महान पंरपरा को जनमानस के सहयोग से शासन–प्रशासन के साथ ही स्व सहायता संस्थाओं के सहयोग से संवर्धन, सरंक्षण का कार्य सतत् होते रहना चाहिए ताकि भावी पीढ़ी भी अपने पूर्वजों के इस सुंदर संस्कृति को जी सकें।

संचालनालय, आदिमजाति अनुसंधान एवं प्रशिक्षण संस्थान

सेक्टर 24, नवा रायपुर अटल नगर, छत्तीसगढ़

Website: cgtrti.gov.in, E-mail: trti.cg@nic.in

Phone: 0771-2960530, Fax: 0771-2960531